भूमिका

हिन्दी भाषा में इस विषय पर शायद यह प्रथम पुस्तक है, और इस लिए इसके लेखक पं० रामसहायजी का प्रयास स्तुत्य है। शायद विस्तार भय से इस विषय की सम्पूर्ण मुख्य अंग्रेज़ी पुस्तकों के सार का समावेश नहीं किया जा सका है, परन्तु तो भी पुस्तक उपादेय है, और खोज के साथ लिखी गई है।

स्मृति शक्ति मनुष्य के शरीर में एक अद्‌भुत चमत्कार है। इसका व्यापार जितना आश्चर्य जनक है उतना ही दुर्बोध है। योग्य लेखक ने स्मृति के विभिन्न स्वरूप गुण तथा कार्यों का मार्मिक विश्लेषण किया है और लगभग १०० पृष्ठों में इस विषय की सम्पूर्ण ज्ञातव्य बातों का सुगम और सरल भाषा में उल्लेख कर दिया है। जो पाठक अंग्रेज़ी नहीं जानते उनके लिये यह ग्रन्थ एक अज्ञात विषय में प्रवेश कराने वाला है और जो अंग्रेज़ी जानते हैं, वे भी इन थोड़े से पृष्ठों को पढ़ कर कई पुस्तकों का सार अल्प समय में जान सकते है।

विषय और भाषा के समान यदि इस उपयोगी ग्रन्थ की छपाई भी सुन्दर और शुद्ध होती तो बहुत अच्छा होता।

कोटा ता० १४-१२-३४ — डा० मथुरालाल शर्मा
एम. ए., डी. लिट्.

लेखक का वक्तव्य

हिन्दी संसार में स्मृति के ऊपर यह प्रथम पुस्तक है। जो कुछ भी पाठकों को इस पुस्तक में मिलेगा, वह पाश्चात्य मनो-वैज्ञानिकों के गम्भीर परिश्रम का फल है। लेखक इस पुस्तक की मौलिकता का अधिकार नहीं रख सकता। लेखक ने कुछ मनो वैज्ञानिक प्रयोग किये हैं उनका उल्लेख प्रसंगानुसार किया गया है। पाठकों को इस पुस्तक में अशुद्धियां अवश्य ही मिलेंगी, यह अशुद्धियां प्रेस की असावधानी के कारण रह गई हैं। दूसरे संस्करण में इन अशुद्धियों पर विशेष ध्यान रखा जायगा। पाठकों से नम्र निवेदन है, कि जहां कहीं यह अशुद्धियां हों, संभाल कर पढ़ें।

मैं पं० मथुरालाल जी एम ए., डी. लिट्. का विशेष आभारी हूँ, जिन्हों ने इस पुस्तक की भूमिका लिखने का कष्ट किया, और समयानुसार उचित सहायता प्रदान की हे।

इस पुस्तक के लिखने मे सरलता और प्रचलित शब्दों पर ध्यान रखा गया है, जिससे कि पाठकों को कोष की शरण मे न जाना पड़े, और साधारण व्यक्ति भी आसानी से समझ सके। प्रधानतः यह पुस्तक विद्यार्थियों व्यवसाइयों और लेखकों को उपयोगी है, और मैं आशा करता हूं, कि उक्त व्यक्ति इस पुस्तक से परियाप्त लाभ उठा सकेंगे। मैने इस पुस्तक में स्मृति के मुख्य २ नियमों का उल्लेख किया है। हमारी स्मरण शक्ति इन्हीं नियमों के आधार पर कार्य करती है। नियमों का

ज्ञान होना भी आवश्यक है, लेकिन केवल नियमों का ज्ञान अभ्यास की अनुपस्थिती में कुछ नहीं कर सकता। नियमों का अभ्यास करना अतिआवश्यक है।

कोटा ता० १४-१२-३४ } विनीत
रामसहाय शर्मा

LIST OF SOME OF THE REFERENCE BOOKS FOR THIS EDITION.

(1) HOW TO REMEMBER- by Mr. Miles
(2) SCIENCE OF MEMORY- by David Kay.
(3) HOW TO MEMORISE by W Evanse
(4) NATURE OF INTELLIGENCE- by C Spearman
(5) MEMORY AND ITS CULTIVATION- by F W Edridge Green
(6) DISEASE OF MEMORY- by Thomas Rebot
(7) MANUAL OF PHRENOLOGY- by A T Story
(8) HOW TO READ HEADS by James Coolis
(9) PHYSIOLOGY AND PSYCHOLOGY- by W Mc. Daugall
(10) SCIENCE OF EDUCATION- by Fredrick John Herbert
(11) CHILD'S STUDY- by E A Kirkpatrick
(12) CHILD'S MIND- by Dumiritle.
(13) PSYCHOLOGY- by James
(14) PSYCHOLOGY OF SUCCESS, by W Atkinson
(15) PSYCHOLOGY OF EDUCATION, by- W Walton.
(16) PRINCIPLES OF EDUCATION- by T. Raymond.
(17) PSYCHOLOGY- by Mc. Dougall.
(18) ANATOMY by C Gray.

विषय सूची

मस्तिष्क चित्र

वृहत् मस्तिष्क

सम बधारण
अंत वेधि और
उच्च चेतना
का स्थान

लघु
मस्तिष्क

सेतु

सविकल्पक
और निर्वि
कल्पक प्रत्यक्ष
ज्ञान और
साधारण चेत-
ना का स्थान

सुषुम्ना शीर्षक मस्तिष्क
निर्विकल्पक प्रत्यक्ष ज्ञान
का स्थान, हाथ पैर
हिलाना और अचेतन्य
आवेग इत्यादि.

हमारा चेतन मस्तिष्क और उसके कार्य

मनुष्य का कोई भी कार्य ऐसा नहीं होता, जिसका चेतन मस्तिष्क से सम्बन्ध न हो। सूक्ष्म से सूक्ष्म भौतिक गति सब से पहिले मस्तिष्क को ज्ञात हो जाती है। बहुत सी भावी घटनाओं का आभास भी प्रथम मस्तिष्क को ही होता है। स्वप्न विशारदों का और शरीर वैज्ञानिकों का मत है, कि ज्योतिषी की तरह स्वप्न और बहुत सी शारीरिक गति व्यक्ति को भावी घटनाओं की सूचना देदेती हैं। चेतन मस्तिष्क सारे शरीर का अधिपति है। हमारा सारा कार्य एक चेतन मस्तिष्क के अधिकार में है। ऐच्छिक कार्य (Voluntary actions) मस्तिष्क की परामर्ष से ही होते रहते हैं। अनैच्छिक कार्य (Involuntary actions) स्वतः ही हुआ करते हैं। प्रारम्भिक अवस्था में यह कार्य भी मस्तिष्क की आज्ञा से ही होते हैं। कितने ही मनोविज्ञान वेत्ताओं की धारणा है, कि ऐच्छिक कार्य ही किसी समय अनैच्छिक हो जाते हैं। अनैच्छिक कार्यों का भार आदतों पर भी निर्भर होता है। बाल्यावस्था में बहुत से कार्य ऐच्छिक होते हैं। उदाहरणतया पलक मारना, हँसना, रोना, इत्यादि। लेकिन शनैः २ यह कार्य भी आदत के अधिकार में पड़ कर अनैच्छिक होजाते हैं। ऐच्छिक कार्यों में व्यक्ति को मानसिक तथा शारीरिक श्रम करना पड़ता है। अनैच्छिक कार्य बिना

किसी श्रम के ही होते रहते हैं। इन कार्यों में मांस पेशियों को ही श्रम करना पड़ता है। चेतन मस्तिष्क कुछ समय तक किसी अमुक विषय को ऐच्छिक रूप से ग्रहण करता है। इस विषय के लिए मस्तिष्क में चेतना वलात्कार होती है। स्नायुओं को तथा वातकूपों को श्रम करना पड़ता है। किसी नवीन विषय को ग्रहण करने में स्नायु शक्ति (Nervous energy) को भी बहुत परिश्रम करना पड़ता है। स्नायु तागों (Axons) को और पुंछल्लों को तथा भावकूपों (Neurons) को, अन्य चेतन्य केन्द्रों को सम्बन्ध स्थापित करने में घोर प्रयत्न करना पड़ता है। किसी २ स्थलों पर यह अपनी निर्बलता के कारण सम्बन्ध स्थापित कर भी नहीं सकते। जिन विषयों का चेतन्य केन्द्रों से सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। ऐसे विषयों के लिए मस्तिष्क में कुछ समय के पश्चात् विशेष चैतन्य स्थान भी नियत होजाता है। जेम्स (James) के मानसिक प्रयोगों ने यहाँ तक प्रमाणित कर दिया है, कि ऐसे विषयों के लिए मस्तिष्क कोष्ट (Brain cells) भी निर्माण हो जाते हैं।

नवीन मनो-वैज्ञानिकों ने ऐच्छक कार्यों का सम्बन्ध मन से रक्खा है। मन अथवा इच्छा-शक्ति उन कार्यों को अपनाती है, जो विशेषतः अमल में लाए जा सकते हैं। बहुत से ऐसे भी कार्य होते हैं। जो ऐच्छक कार्यों के साथ-२ वे मालूम ही हुआ करते हैं। बहुत सी शारीरिक गति जैसे मल, मूत्र, त्याग क्रिया, पसीना निकलना, और कितने ही मानसिक कार्य अथवा स्वास्थ्य रक्षक शारीरिक क्रियायें, यह कार्य अनैच्छिक हुआ करते हैं। उदाहरणतया जब कोई रेल यात्री किसी ट्रेन

के लिए स्टेशन को जाता है। उस समय ऐच्छिक कार्य की सहायता से ट्रेन में बैठता है। लेकिन अनैच्छिक कार्य इतने विषद और भिन्न होते हैं, कि उनका उल्लेख करना लेखक की साधारण योग्यता से परे है। हृदय की गति, पैरों और हाथों का चलना, स्वांस लेना, सुषुम्ना शीर्षक मस्तिष्क (Medulla oblongata) के बहुत से कार्य। इन सब कार्यों मे बृहत् मस्तिष्क (Cerebrum) का योग भी होता है। नवीन मनोवैज्ञानिक इन कार्यों को अचेत कार्य कहते है। इन अचेत क्रियाओं की अनुपस्थिति मे सचेत क्रियाओं का होना भी किसी समय असम्भव हो जाता है। हृदय की गति रुक जाने से भीषण परिणाम की आशंका होजाती है। मन और मस्तिष्क के अचेत कार्य सचेत कार्यों के सूचक समझने चाहिए। अचेत कार्यों और सचेत कार्यों को नवीन मनो वैज्ञानिक इच्छा (will) और कल्पना (Imagination) द्वारा प्रकाशित करते है। तत्ववेत्ता फ्रेडरिक हरबर्ट (Fredrick Herbert) का मत है, कि मन की सचेत अवस्था, और कार्यों का इच्छा से सम्बन्ध होता है। बहुत से कल्पनात्मक भावों को तीव्र आशा द्वारा ही इच्छा से सम्बन्धित कर सकते हैं। या उक्त भावना को इच्छा मे परिवर्तन कर सकते है।

"Education is the manifestation of the perfection already in Men" उपस्थित शिक्षा और ज्ञान मनुष्य की आन्तरिक पूर्णता का सूचक है। दार्शनिक भाषा में उपरोक्त कथन को चेतन और अर्ध चेतन मस्तिष्क के नाम से पुकारते हैं। अर्ध चेतन मस्तिष्क क्या है। इस विषय पर भी प्रकाश

डालना बहुत आवश्यक है। अर्ध चेतन मस्तिष्क जन्म जन्मान्तर के उपलब्ध किये हुए अनुभव और ज्ञान का भन्डार होता है।

आवागमन के विवाद-ग्रस्थ प्रश्नों को भी अर्ध चेतन मस्तिष्क की अपूर्ण अवस्था ही किसी रूप तक हल कर सकती है। उपलब्ध किये हुए ज्ञान का कभी नाश नहीं होता। स्मृति का अवश्य ही ह्रास होजाता है। स्मृति का ह्रास होने से ज्ञान भी आच्छादित हो जाता है। जब हमारा जीवन और उसके कार्य जटिल होजाते हैं, उस समय भी बहुत सी घटनायें स्मरण नहीं रहतीं, पहिले जीवन की घटनाओं को स्मरण रखने का प्रश्न केवल भ्रम मात्र ही हो सकता है। ज्ञान और स्मरण शक्ति आपस में बहुत प्रथक २ हैं। जो कुछ भी ज्ञान अथवा अनुभव अनेक जन्मों में प्राप्त किया है, और हमारे अर्ध-चेतन मस्तिष्क में एकत्रित है। उनका प्रमाण मनुष्य का बुद्धि भेद या विचार-भेद हो सकता है। दो मनुष्यों की बुद्धि आपस में एक कदापि नहीं हो सकती। दूसरा प्रमाण पुनर्जन्म के संचित ज्ञान का यह हो सकता है कि जब हम किसी विषय को अथवा विचार को ग्रहण करते हैं उस समय उक्त विचार अथवा विषय की पहिले अनुभव या ज्ञान के साथ तुलना करते हैं। जब पहिले ज्ञान में और नवीन विषय में कुछ समता होती है, तब हम उस विषय को स्वीकार कर लेते हैं। जब इन दोनों में कुछ विषमता होती है, तब हम उस विषय का अस्वीकार करते हैं। ज्ञान और अज्ञान में भी यही अन्तर होता है।

जिसको हम मध्य युग में विवेक (Reason) के नामसे पुकारते हैं, वह भी पूर्व जन्म का संचित ज्ञान ही हो सकता है। मन की इस क्रिया को संकल्प और विकल्प भी कहते हैं। कभी २ जन्मान्तर के संचित ज्ञान को आत्मक पुकार कह कर सम्बोधन करते हैं। कवि सम्राट टेनीसन (Tennyson) ने (Two Voices) दो आत्मक पुकार पर एक सुन्दर कविता लिखी है।

अब हम पाठकों को यह बतलाना चाहते हैं, कि बड़े २ मनोवैज्ञानिकों ने इस विषय में कहां तक खोज की है। मध्य युग का सब से बड़ा मनो-वैज्ञानिक जेम्स और मेडूगल हुए हैं उन्हों ने मनुष्य समाज के उपस्थित विकास की महत्वपूर्ण खोज कर के यह सिद्ध कर दिया है, कि मनुष्य समाज के ज्ञान का सूत्र पात निःसन्देह बीज परम्परागत (Biological-heredity) है। जब शिशु के मस्तिष्क के बहुत से स्थलों पर अनुसंधान किया जाता है, या उसके चेतन्य कार्यों को देख कर अनुमान किया जाता है। उस समय ज्ञान होता है, कि बच्चे की Embriological State (कच्ची दशा) भी (Biological evolution) बीज रूपी विकास के सिद्धान्त को साबित करती है। एक शिशु उन मस्तिष्क केन्द्रों को तथा स्थलों को जन्म के साथ ही लाता है। जिनकी सहायता से उसका भावी जीवन निर्णय हो सकता है। यही अचेत मस्तिष्क केन्द्र या स्थल आगे चल कर सचेत हो जाते हैं। उदाहरण के लिये भाषा केन्द्र, दृष्टि केन्द्र, घ्रांण केन्द्र, श्रोत केन्द्र, रसना केन्द्र, के लिये शिशु के मस्तिष्क में केवल स्थान मात्र होता है। यह स्थान बिलकुल शून्य होते हैं। कहीं २ अस्पष्ट चिन्ह भी दीख पड़ते हैं।

विचार क्षेत्र (Cortical region) का नाम मात्र ही होता है। एक नव शिशु पहिले पहिल निर्बल दृष्टि केन्द्र की सहायता से केवल अंधेरे और उजाले के अन्तर को ही पहिचानने की योग्यता रखता है। इसी प्रकार निर्बल भाषा केन्द्र की सहायता से वह केवल रोकर, या चिल्ला कर, या हाथ हिला कर, अपने आन्तरिक भावों को प्रकाशित कर सकता है। शुषुम्ना शीर्षक मस्तिष्क (Medulla oblongata) और लघु मस्तिष्क (Cerebellum) की सहायता से वह केवल अपने हाथ पैर हिला सकता है, या अन्य सांकेत कर सकता है। आगे चल कर यही सब इतने चैतन्य और सम्बृद्धशाली हो जाते हैं, कि जटिल समस्याओं को भी हल करना आसान हो जाता है। केवल रोकर अपने भाव प्रगट करने वाला असहाय शिशु कुछ ही समय में योग्य वक्ता बन जाता है। अंधेरे और उजाले के अन्तर को पहिचानने वाला बालक सूक्ष्म से सूक्ष्म भावों को आसानी से जानने योग्य हो जाता है। हाथ हिलाने वाला बच्चा आगे चल कर मेधावी कलाकार बन जाता है।

मस्तिष्क की (Protoplasmic State) कच्ची (द्रव्य) दशा अवश्य होती है। सब मस्तिष्क केन्द्र निर्बल अवश्य होते हैं। और कोई २ केन्द्र अन्धकारमय भी होते हैं। लेकिन यह निर्बलता सबलता की सूचक है। और अन्धकार प्रकाश का सूचक है। आदि व्यक्ति (Primitive man) के मस्तिष्क केन्द्र आज कल के नव शिशु के समान नहीं थे, अर्थात् वह अति निर्बल और कहीं २ तो उनके लिये मस्तिष्क में स्थान ही नियत नहीं था। जैसा कि प्रायः आज कल के अंगहीन और बुद्धिहीन बच्चों के मस्तिष्क में होता है। जो बच्चा जन्म ही से अन्धा

गूंगा, बहिरा होगा, उसके उक्त मस्तिष्क केन्द्र भी नहीं होंगे। यह भी देखा गया है, कि बहुत से योग्य व्यक्तियों के वंशजों में भी यह चेतन्य केन्द्र कुछ २ उच्च दशा में मिलते हैं। यह केन्द्र बहुत ही शीघ्र समुन्नत हो जाते हैं। जो कुछ नव शिशु को चेतना होती है। वह उसके वंश परम्परागत अनुभव का ही प्रतिफल है। बहुत सी मनोवैज्ञानिक खोजों से ज्ञात हुआ है, कि चेतन्य केन्द्र, और कितनी मनोवृत्तियां ऐसी अवस्था में प्राप्त होती हैं, जिनसे परम्परागत विकास का और भी निश्चय हो सकता है। खेलने की वृत्ति, स्पर्धा वृत्ति, झगड़ालूपन की वृत्ति इत्यादि। डा० मेडूगल ने १०० मनोवृत्तिओं से कुछ अधिक मानी हैं।

डा० गोडार्ड ने अमेरिका में कितने ही कुटुम्बों की जांच की और वंषजों की मनोवृत्तिओं पर प्रयोग किये, एक केलीकाक कुटुम्ब के ४९६ व्यक्तियों में ३ वंशजों के अतिरिक्त शेष सब अपने पूर्वजों के अनुसार विख्यात और सुप्रतिष्ठित थे। मेरे प्रयोग भी इसी व्यवस्था को प्रमाणित करते हैं। मैंने ४० परिवारों की खोज की और ज्ञात हुआ है कि इन परिवारों के वंशज भी अपने पूर्वजों की मनोवृत्तिओं को लिये हुये थे। लेकिन इतना अवश्य देखा गया, कि वृत्तिओं का विकास विशेषतः प्रतिवेस के अधिकार में होता है। पाठक यद्यपि अपने २ अनुभव पर ध्यान देंगे, तो उन्हें ज्ञात हो सकता है कि छोटे २ बच्चे प्रायः अपने पूर्वजों के भावों का अथवा कार्यों का अनुकरण किया करते हैं।

लेखक को पूर्णतया स्मरण है कि मैं बालक्रीड़ा में अन्य बच्चों को वादी और प्रति वादी बना लिया करता था, और उनके

मुक़द्दमों का निर्णय किया करता था। उनको कभी २ सम्मति भी दिया करता था। मेरे पिता वकील थे। इसलिये उक्त मनोवृत्तिओं का होना स्वाभाविक ही था। इसी तरह के कितने ही उदाहरण नित्य प्रति देखने में आया करते हैं। मैंने और भी मनोवृत्तिओं के प्रयोग किये, दो बच्चों को देखा। पहिले बच्चे का पिता एक दफ़्तर में लेखक का कार्य करता था। दूसरे का पिता इंजिनियर था लेखक का बच्चा लेखन कला सम्बन्धी विषयों की बाल क्रीड़ा किया करता था। इंजिनियर का बालक गृह निर्माण और पुल इत्यादि रचना सम्बन्धी विषयों की बालक्रीड़ा में अनुकरण किया करता था। इन बच्चों की अवस्था ४ या ५ वर्ष के लगभग थी। इसलिये यह कहना सत्य है, कि बच्चों के अर्ध चेतन अथवा चेतन मस्तिष्क अपने पूर्वजों की आर्जित भावनाओं के अनुसार सचेत होते हैं। मस्तिष्क के केन्द्र भी पूर्वजों की मनोवृत्तिओं की तरह सजीव पाए जाते हैं। केन्द्र गामी और केन्द्र त्यागी नाड़ियां (Afferent and-efferent nerves) भी अधिक सचेत पाई गई हैं। प्रत्येक भावों का आवागमन इन्हीं दो नाड़ियों के आधार पर होता रहता है।

जिन व्यक्तिओं को आकृति परिचय का थोड़ा भी ज्ञान है। वह मनुष्य को देखते ही, उसका चरित्र कह सकते हैं। शिवाजी और नेपोलियन इस विषय के पंडित थे। वह मनुष्य को देखते ही उसके आन्तरिक भावों को पहिचान सकते थे। हमारे अंगों की बाहय बनावट आन्तरिक परिस्थिती का सूचक है। जिन व्यक्तियों का लम्बा चेहरा होता है, वह प्राय: साक्षर या लेखक होते हैं। ऐसे व्यक्तिओं का जीवन अमली कम

होता है। इस श्रेणी के व्यक्ति आदर्श वादी होते है। और जिन व्यक्तिओं की मुखाकृति गोल होती है। वह अधिक अमली जीवन व्यतीत करते हैं। जिन पुरुषों की नाक छोटी, ठोड़ी छोटी, और होस्ट आगे को लटका हुआ होता है; वह विशेषतः चंचल वृत्ति प्रधान होते हैं। इस तरह के चिन्हों की बहुत बड़ी व्याख्या है। सम्भवतः भारी ग्रन्थ भी बन सकते है। दूसरी भाषाओं में इस विषय पर कितने ही ग्रन्थ हैं। यह मस्तिष्क के सचेत भागों का ही फल समझना चाहिये।

अब हम पाठकों को यह बतलाना चाहते हैं, कि मस्तिष्क का और हमारी भावनाओं का क्या सम्बन्ध है। और यह भावनायें हमारी मानसिक उन्नति में किस प्रकार सहायता करती हैं। मानव जाति की कोनसी भावनायें जीवन का मार्ग निर्णय करतीं है। मुख्यतः प्रारम्भिक अवस्था में शरीर-वैज्ञानिकों के मतानुसार मस्तिष्क के तीन भाग होते है। पिछला मस्तिष्क (Rhomb encephalan) मध्य मस्तिष्क (Mes encephalan) आगे का मस्तिष्क (Pros encephalan)। बच्चों के मस्तिष्क की यही दशा होती है। लेकिन मनो-वैज्ञानिकों ने अपने मतानुसार मस्तिष्क को चार भागों में विभाजित किया है। सुषुम्ना शीर्षक मस्तिष्क (Medulla oblongata) लघु मस्तिष्क (Cerebellum) बृहत् मस्तिष्क (Cerebrum) सेतु (Pons)। सुषुम्ना शीर्षक मस्तिष्क सब से नीचा हिस्सा होता है। इस का कार्य भिन्न २ शारीरिक अवयवों की गति को अधिकार में रखना, और उनको आवश्यकतानुसार प्रचालन करना। सेतु लघु-मस्तिष्क को और सुषुम्ना शीर्षक मस्तिष्क को जोड़ता है। प्रत्येक आवेग सेतु में होकर लघु मस्तिष्क में

पहुंचता है। लघु मस्तिष्क को आवेग केन्द्र कहना अतियुक्त नहीं है। बहुत से आवेग स्थाई होते हैं। जिनका कुछ फल निकल सकता है। और कितने ही आवेग ऐसे होते हैं। जो कुछ दूर चल कर विलीन हो जाते हैं। इनका कोई फल या तत्कालीन परिणाम नहीं निकल सकता, जैसे प्रसन्नता और दुःख इत्यादि यद्यपि इन को अंतः क्षोभ भी कह सकते हैं। बृहत मस्तिष्क विषय का निर्णय और तुलना करता है।

उतना ही व्यक्ति बुद्धिमान होगा। ऊच्च विचारों का यही स्थान होता है। तत्व विचार यहीं से उत्पन्न होते हैं। यह कोष्ट और मसाला विचारों की सहायता करते हैं।

व्यक्ति जितना अधिक बुद्धिमान और विचार शील होगा, उतना ही भूरा और सफ़ेद मसाला अधिक होगा। और सिर का ऊपरी भाग खुला हुआ होगा, पर सिर गोल और चौसर होगा। बड़े से बड़े मनुष्य के मस्तिष्क का वज़न १८४० *gms.* या १$\frac{३}{४}$ या १$\frac{१}{२}$ सेर से कुछ अधिक होता है। साधारण मनुष्य के भेजे की तोल १$\frac{१}{२}$ सेर से अधिक कदापि नहीं हो सकती। बड़ी से बड़ी स्त्री के मस्तिष्क का बोझ १$\frac{१}{२}$ से या १५८५ *gms.* से अधिक नहीं हो सकता है। साधारणतयः स्त्रीओं का भेजा १$\frac{१}{४}$ सेर का ही होता है। जेम्स के प्रयोगों के अनुसार इन मस्तिष्क कोष्टों की गणना क़रीब क़रीब २८०,०००,०००,००० होती है। पुंछल्ले (Neurons) भी भाव कूपों या कोष्टों का ही बढ़ा हुआ हिस्सा समझना चाहिये। इस लिए इनको भी मैं भाव कूप कहना अधिक सरल समझता हूँ। इनकी गणना करना बहुत ही कठिन है। अगर एक आदमी १२ घन्टे प्रति दिन काम करे, और १ मिनिट में ५० भाव कूप या पुंछल्ले (Neurons) गिने, तो उसको क़रीब २०० वर्ष से अधिक समय लग जायगा। कितने ही मनोविज्ञान वेत्ताओं का कहना है। कि इन सैल्स का घटना और बढ़ना मनुष्य के कार्य के अनुसार होता है। यही कारण है, कि हमारी कठिनाइयाँ कार्य के साथ साथ शनैः दूर होती जातीं हैं। इन सैल्स या भाव कूपों की कमी के कारण व्यक्ति को कार्य करने में कुछ कठिनता होती

है। लेकिन जब व्यक्ति कार्यारूढ़ हो जाता है, उस की कठिनता भी कोष्ट या भावकूपों की अधिकता के कारण कम हो जाती है। जब प्रथक २ पड़े हुये भाव कूप आपस में मिल जाते हैं। उस समय ही विचार सम्बन्ध हो जाता है।

जितने अधिक यह कोष्ट और पुंछल्ले होंगे, उसी अनुपात से व्यक्ति अधिक विचार कर सकेगा, और दूरदर्शिता को काम में ला सकेगा। इन सैल्स और पुंछल्लों की अधिकता ही दूरदर्शिता की सूचक होती है। यह दोनों विचारों की बड़ी सहायता करते हैं। प्रसंगिक विचार इन दोनों के बल पर ही सदैव कार्य करते हैं। सम्वृद्धिशाली विचारों के केन्द्र यही कोष्ट और पुंछल्ले होते हैं। किसी अमुक आदत के निर्माण में भी इन्ही का प्रथम योग होता है। जैसे २ आदत बढ़ती जाती है, ठीक उसी अनुपात से यह भी मस्तिष्क के विशेष भाग में बढ़ते जाते हैं। और आदत की कमी के कारण इन में भी कमी हो जाती है। मस्तिष्क का कार्यालय बहुत पेचीदा है। एक आवेग को नियत स्थान तक पहुॅचने में बहुत रुकावटें भी होती हैं,। यह रुकावटें भी स्नायुओं, कोष्ट, और पुंछल्लों की अधिकता के कारण होतीं हैं। जितना आवेग प्रबल होगा, उतना वह रुकावटों को भी पार कर सकेगा।

जहां तक देखा गया है, यही दीख पड़ता है कि व्यक्ति में जितनी चेतन्यता अधिक होती है, उतना ही वह अपनी कठिनाइयों पर विजय प्राप्त कर सकता है। रुकावटों को पार करना भी चेतन्यता पर ही निर्भर है। इस चेतना को ही बहुत से

नाम से पुकारते है। अगर गम्भीर दृष्टि से देखा जाय तब ज्ञात हो जाता है, कि ज्ञान और बुद्धि का भेद केवल मस्तिष्क के भिन्न २ भागों के अपूर्ण ज्ञान का ही प्रतिफल है। इन दोनों में मौलिक अन्तर नहीं है। किसी स्थल पर कह चुके हैं, कि जो व्यक्ति बुद्धिमान होते हैं। उनकी मुखाकृति ही बुद्धिबल को सूचित कर देती है। और उनकी मस्तिष्क रचना भी भिन्न होती है। सौक्रटीज़,कार्लमार्क्स और लेनिन,इत्यादि के मस्तिष्क विभागों की परीक्षा करने पर ज्ञात हुआ है, कि मस्तिष्क केन्द्र या अन्य हिस्से इन महान् पुरुषों के बहुत ही चैतन्य दशा में थे। पिछले व्यक्ति के मस्तिष्क ने मनो वैज्ञानिकों के बहुत से भ्रमों को दूर कर दिया है। इस क्रान्तिकारी राजनैतिज्ञ के मस्तिष्क के प्रतिक्रियात्मक कितने हिस्से बहुत ही ऊंची अवस्था में थे। इसी तरह के संसार के इतिहास में कितने ही उदाहरण मिल सकते हैं। विज्ञान विशारदों के भी उत्पादक मस्तिष्क केन्द्र (Creative Neucleos) बहुत ऊंची दशा में होते है।

मनोवैज्ञानिकों का अनुमान है कि महान् व्यक्तियों की पहिचान यही है, कि जितनी उनकी सफलता के मार्ग में रुकावटे होंगी। उतने ही वह उन पर चैतन्य केन्द्रों की सहायता से विजय प्राप्त करने को उत्सुक होंगे।

हमारी मनोवृत्तियों का आधार विशेषतः स्पर्ष-मंडल या प्रतिवेस पर रहता है। प्राणी मनोवृत्ति प्रधान अवश्य होता है। लेकिन इन वृतियों का विकास सदैव स्पर्श मंडल की सहायता से ही होता है। व्यक्ति की वृत्तियां कितनी ही सम्वृद्धिशाली क्यों न हों, वह अच्छे प्रतिवेस की अनुपस्थिती में कदापि

विकसित नहीं हो सकतीं। कितने ही मनोवैज्ञानिकों के प्रयोग करने पर ज्ञात हुआ है, कि मनुष्य को अथवा उसके बच्चे को पशु समुदाय में रखने से बहुत सी मानुषिक भानमायें सदैव के लिये नष्ट हो जाती हैं। और पशु वृत्तियों का उदय हो जाता है। देखा गया है, कि ऐसी परिस्थिति में मस्तिष्क के कितने ही चैतन्य केन्द्र भी आच्छादित हो जाते हैं। कभी कभी यह कार्य तीसरे महीने से पहिले ही शुरू हो जाता है। दूसरा मानसिक कारण यह भी है कि मनुष्य समाज का सभ्य जीवन बहुत कम रहा है, इसलिये भी असभ्य वृत्तियों का संचालन शीघ्र हो निकलता है। जब हम शरीर विज्ञान की दृष्टि से विषय की आलोचना करते हैं, तब भी ज्ञात होता है कि स्नायु शक्ति (Nervous Energy) भी पहिले मार्गों मे ही शीघ्रता से प्रवेश करना चाहती है। अस्तु स्नायु विज्ञान द्वारा भी यही प्रमाणित होता है, कि स्पर्ष मंडल का और मनोवृत्तियों का घनिष्ट सम्बन्ध है।

एक छोटे बच्चे को भेड़िया उठा लेगया, उसका पालन पोषण कुछ काल तक भेड़िये के पास हुआ। तत्पश्चात् उक्त बच्चे को मनुष्य समाज में लाया गया। बहुत से प्रयत्न करने पर भी बच्चा पशु की चाल चलता रहा। उसी तरह कुछ समय तक बोलता रहा। कठिन परिश्रम करने पर भी वह साक्षर न हो सका। कारावास कहानियों को सुन कर और भी अचम्भित होना पड़ता है। जो व्यक्ति किसी भी घटना द्वारा जेल यात्रा करता है। कभी उसको ऐसे अभियुक्त के साथ रहने का अवसर मिला, जिसको डाके और चोरी के अभियोग में कारावास आना पड़ा हो, बेचारा नवीन व्यक्ति बहुत से नवीन दोषों से

युक्त होकर लौटता है। यह स्पर्श मंडल का जीता जागता उदाहरण पाठकों को मिल सकता है। शरीर विज्ञान का प्रसिद्ध सिद्धांत है कि शरीर रचना के बहुत से तत्वों का नाश और उत्पत्ति जल वायु के साथ २ प्रतिवेसात्मक और सामाजिक भी है। ठीक इसी प्रकार मनोविज्ञान (Psychology) का भी सिद्धान्त है, कि बहुत से मन संयोग और भावनाओं की उत्पत्ति और नाश प्रतिवेस पर निर्भर होता है। यन्त्रों द्वारा यहां तक देखा गयाहै, कि मस्तिष्क कूप (Brain cells) भाव कूप या पुंछल्ले (Neurons) चैतन्य केन्द्र (Neucleos) इत्यादि भी प्रतिवेस के अधिकार में रहते हैं। और इनका विकास भी स्पर्श मंडल पर अवलम्बित रहता है।

प्रतिवेस का असर हमारे शारीरिक अवयवों पर और भी प्रबल होता है। भावनाओं के साथ २ आदतें भी प्रतिवेसिक होती हैं। चरित्र रचना के बहुत से तत्वों का विकास हमारे सहवास से ही होता है। जब व्यक्ति को किसी मुख्य स्पर्श मंडल में रहने का सौभाग्य प्राप्त होजाता है। उस समय मस्तिष्क कूप इतनी शीघ्रता से बढ़ जाते हैं। कि मस्तिष्क में स्वतः ही उक्त विषय के लिये खास स्थान नियत हो जाता है। इन स्थानों को चैतन्य क्षेत्र (Conscious regions) या विचार क्षेत्र (Centres of ideation) कहते हैं। व्यक्ति को मुख्यतः स्पर्श मंडल से अनुकरण, सहानुभूतिक, स्पर्धात्मक और अन्य बहुत सी वृत्तियां और प्रवृत्तियां प्राप्त होती हैं। किसी घटना को स्मरण रखना उसकी सहायता से विकास करना, अथवा रक्षा करना, भी मानुषिक वृत्ति होती है। इसलिए ही जेम्स, मिल, स्पेन्सर इत्यादि मनो विज्ञान वेत्ताओं ने भी स्मृति को

बहुत से मानसिक व्योपारों का केन्द्र माना है। उनके मतानुसार स्मृति और विस्मृति भी प्रधान मानसिक वृत्तियां हैं, और यह दोनों मनुष्य समाज की बहुत बड़ी कल्याणकारी भावनायें मानी गई है। स्मरण शक्ति का सारा भार मानसिक सम्बन्धों पर होता रहता है। कुछ विचार सम्बन्ध अप्रत्याहृत (Concrete) और कुछ प्रत्याहृत (Abstract) विषयों से बना करते हैं। मनोविज्ञान वेत्ता यह पूर्ण रूप से निर्णय कर सके हैं, कि साकार विषय ही बलवान और स्थाई विचार-सम्बन्ध बनाने में सफल होते हैं। और निराकार विषय इन से कुछ कम। यह सब विषय अनेक रूप से स्पर्श मंडल के गर्भ में सदैव उपस्थित रहते हैं। और आवश्यकतानुसार इसी से मनुष्य समाज को प्राप्त हो सकते हैं।

स्मरण शक्ति का विकास किस प्रकार से होता है। बच्चों में स्मरण शक्ति के तन्तु किस अवस्था में रहते हैं, और इसी प्रकार के अन्य प्रश्नों का इस स्थल पर विचार करना ठीक है। अंग्रेज़ी भाषा मे इस विषय पर बहुत से ग्रन्थ है लेकिन हिन्दी मे इस विषय का अभी नाम तक नहीं है। अमेरिका और कितने ही अन्य देशों में बहुत से मनोवैज्ञानिक प्रयोग किये गये है। स्मरण शक्ति के प्रयोगों का करने वाला एबिंग हाऊस (Ebbinghouse) सब से प्रसिद्ध है, जैसा कि आगे स्पष्ट कर दिया गया है, कि स्मरण शक्ति का सारा भार विचार-सम्बन्ध पर होता है। जो मस्तिष्क विचार सम्बन्ध उचित रीति से स्थापित कर सकेगा, उसी मस्तिष्क में स्मरण शक्ति बलवान हो सकती है। बच्चों का मस्तिष्क विचारों से शून्य होता है इसलिये उनको स्मृति शून्य कहना भी ठीक हो सकता है। बच्चे के मस्तिष्क

को हम श्याम पट कहें तो भी अनुचित न होगा। बहुत से मनोवैज्ञानिकों ने इसको श्याम पट के नाम से ही पुकारा है। जैसे व्यक्ति के मस्तिष्क पर स्पर्श मंडल का प्रभाव अधिक पड़ता जाता है, उसी अनुपात से यह श्याम पट भी अङ्कित होता जाता है। जिस प्रकार हमारे ज्ञान का विकास सरल से कठिन की तरफ़ होता है, यही दशा स्मृति की भी है, और यह क्षेत्र भी बढ़ता चला जाता है। भिन्न २ स्नायुओं की धारण शक्ति बृहत होती जाती है, वैसे २ ही स्मरण शक्ति विशाल होती जाती है। १८ वर्ष की आयु तक स्पर्श मंडल से इस शक्ति को बहुत योग मिलता है और ३० वर्ष की आयु के पश्चात् इस शक्ति की बृद्धि समाप्त होजाती है।

बचपन में मस्तिष्क की दशा बहुत कच्ची होती है। इस अवस्था को (Fœtal life or Embryo) कहते हैं। इस दशा में मस्तिष्क विषय को केवल बीज स्वरूप ग्रहण कर सकता है। लेकिन जो कुछ वह ग्रहण करता है, वह धारणा शक्ति में बहुत समय तक रहता है। परिणामतः हम देखते हैं, कि बाल क्रीड़ा की बहुत सी घटनायें हमारे सामने शीघ्रता से नाच निकलती हैं। इस लिये पाठकों को चाहिये, कि वह बालक को बहुत से विषयों का बीज रूप परिचय अवश्य ही करादें। दूसरे शब्दों में यह कहना चाहिये, कि बाल्यावस्था का सहबास बहुत साधारण और बीजात्मक बिषयों से परिपूर्ण अवश्य ही होना चाहिये। जो साधारण ज्ञान अर्ध चेतन मस्तिष्क (Sub-conscious mind), को मिल जाता है, विषय सम्बन्ध स्थापित होते ही शीघ्रता से स्मृति रूपेण फिर प्राप्त हो सकता है। इस लिये विविध प्रकार के ज्ञान द्वारा ही भिन्न २ रूप के

विचार सम्बन्ध आसानी से स्थापित हो सकते हैं। चैतन्य अवस्था (Conscious state) भी प्राय. विचार सम्बन्धों पर ही अवलम्बित रहती है। जिन व्यक्तियों का ज्ञान भंडार अधिक होता है, उनको बहुत से विषय तर्क (Ratiocination) विधि द्वारा ही स्मरण हो जाते हैं। प्रसिद्ध वक्ता अपने विषय को उक्त विधि द्वारा स्मृति में लाते जाते हैं।

अब यह निर्णय करना शेष है, कि सहवास स्मृति प्रधान किस विधि द्वारा हो सकता है। प्रारम्भिक अवस्था में मस्तिष्क को चेतना मुख्यतः चित्रों द्वारा मिलनी चाहिये या यों कहना चाहिये, कि चित्रों को श्रेणीबद्ध कर लेना चाहिये, और यह श्रेणी भी जाति वाचक हो। इस सम्बन्ध मे डा० डारविंस की जाति वाचक (Specie) श्रेणी बहुत ही उपयोगी हो सकती है। साथ ही साथ यह बहुत मनोरंजक भी प्रमाणित होगी। जब पाठक ममाल (Mammals) जाति के प्राणी की जाति वाचक चित्र श्रेणी द्वारा विकास; देखेंगे, उस समय उनको विस्मित होना पड़ेगा। और उनका ज्ञान कोश बहुत वृहत हो जायगा। इस तरह की ज्ञान वृद्धि मे अधिक दिल बहलाव भी होगा। बच्चों को भी इस तरह ज्ञान प्राप्त सुगमता से हो सकता है, जाति भेद किस प्रकार से होता जाता है। आसानी से समझ सकते हैं। और बिना श्रम के इस तरह के विकास को स्मृति में भी रख सकते हैं। इसी प्रकार मेंढकों को कीटाणु भक्षक (Insectivorous) की जाति में रक्खा जाता है। इसका जाति विकास जाति वाचक चित्र श्रेणी द्वारा अति शीघ्रता से समझ में आजाता है, और बिना किसी मानसिक श्रम के स्मरण कर सकते हैं। अमेरिका में ऐसे ही जाति वाचक, और भाव वाचक

चित्रों द्वारा गम्भीर विषय आसानी से समझाये जाते है। और स्मरण भी किये जा सकते है। जहां तक हो सके हमारा प्रतिवेस ऐसे ही हो। रोम के चित्रकारों में यही विशेषता थी, कि वह अपनी कला द्वारा सूक्ष्म से सूक्ष्म भावों का दिग्दर्शन करा सकते थे। चित्रकार टरनर इस विषय मे बहुत विख्यात समझा जाता था। हमारे रवीवरमा का भी बहुत उच्च स्थान था। कितने ही मनोविज्ञान वेत्ताओं ने भिन्न २ कलाओं को सजीव कला माना है, और यह कलायें शिक्षा की विशेष अंग मानी जाती हैं। चित्रकार बहुत बड़ा शिक्षक होता है। जो देश चित्र कला मे पीछे है, वही शिक्षा मे भी पीछे होते हैं। चित्रकला को सजीव स्पर्श मंडल कहना ठीक हो सकता है।

मैंने भी कुछ ऐसे व्यक्तियों पर प्रयोगात्मक दृष्टि से खोज की है, और पता लगा है, कि जो व्यक्ति नाटक और चित्रपटों (Cinema) को अधिक मनोरंजक समझते है। उन व्यक्तियों की स्मरण शक्ति इतनी बलवान हो जाती है कि बिना किसी रुकावट के या विस्मृति के चित्रपट की सारी घटना बड़ी आसानी से दुहरा सकते हैं। यह उन व्यक्तिओं की जांच है। जिनकी स्मरण शक्ति अन्य विषयों में बहुत निर्बल मानी जाती थी। चित्र रूपी सहवास से मस्तिष्क कूपों पर दो प्रकार का असर होता है। चित्रों में किसी घटना का सारा स्वरूप और भाव दोनों ही विद्यमान रहते हैं। इस लिये प्रत्येक ज्ञानेन्द्रिय यथा शक्ति दोनों प्रकार के संदेशों को आसानी से ग्रहण कर सकती है। और उनको निश्चित स्थान तक लेजा सकती है। चित्र मय प्रतिवेस में एक विशेषता यह होती है, कि वह स्थिर और रोचक होता है ज्ञानेन्द्रियां जब तक चाहें, उससे स्वतन्त्रता

के साथ अपना संदेष ले सकती हैं। विषय को साक्षात् देखने से भी यही दशा होती है। सर हेमिल्टन और हर्बर्ट स्पेन्सर ने स्मृति के लिए नेत्र और कान दो मुख्य ज्ञानेन्द्रिओं को ही माना है। उनका कहना है कि 'Sensation of sight or hearing will suggest others of the same sense in preference to those of any other sense' अर्थात् दृष्टि और श्रवण अन्य इन्द्रिओं की अपेक्षा या उनकी तरह संदेष ग्रहण कर सकते हैं। आखों में सूक्ष्म २ गोल डन्डे और त्रकोंण रूपी कोष्ट होते हैं गोल डन्डों की संख्या ३००००००० के क़रीब है। त्रकोंणों की संख्या इन से भी अधिक है। त्रकोंणों का कार्य रंग इत्यादि के भावों को ग्रहण करना है। गोल डन्डों का कार्य भावनाओं की और प्रकाश की तुलना करना है। किसी रंग या उजाले का प्रभाव १/५० से १/३० सेकिन्ड से अधिक स्थाई रह सकता है। सफ़ेद रोशनी का आभास १/२० सेकिन्ड में हो सकता है। किसी रंग को देखने के लिए १/१० सेकिन्ड लग सकते हैं। १/८ सेकिन्ड में एक अक्षर देखा जा सकता है। १/२ सेकिन्ड मे एक साधारण शब्द देख सकते हैं। १/१२ सेकिन्ड में किसी रंग के लिए संकेत कर सकते हैं।

इसी तरह एक शब्द के बोलने के लिए १/९ सेकिन्ड का समय लग जाता है। एक अक्षर को १/६ सेकिन्ड मे बोल सकते हैं। एक छवि को १/४ सेकिन्ड में साधारणतया देख सकते हैं बच्चों की अपेक्षा युवा को उपरोक्त कार्य करना आसान हो सकता है।

श्रोतों को भी तीन भागों मे विभाजित किया है पहिला बाह्य, दूसरा भीतरी और तीसरा वह भाग, जिस में दो द्रव्य

पदार्थ रहते है। इस में भी गोल डन्डों की भीतरी और बाहरी पंक्तियां होती है। उनकी संख्या ६००० और ४५०० के लग भग होती है। आवाज़ एक मिनिट में ११००० फीट चल कर सुनाई देती है। श्रोतों का शब्द और भाषा यन्त्र के साथ घनिष्ट सम्बन्ध होता है। सुनने से मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव पड़ता है। सुनने से ध्यान भी जमता है।

प्रकृति देवी के साम्राज्य में प्रत्येक व्यक्ति को स्मृति ग्राही प्रतिवेस बहुत सरल अवस्था में प्राप्त हो सकता है। उसके लिये हमारे पास परियाप्त साधन भी हैं। सरलता प्रकृति देवी का प्रसिद्ध कार्य है। स्थान २ पर इस सरलता का स्पष्टीकरण होता है। इस सरलता को जानने के लिए संतोष और विशुद्ध बुद्धि की आवश्यकता होती है।

रुचि और स्मृति

जिधर देखा जाता है, उधर ही से कुछ न कुछ मानव कार्य में उन्नति दिखलाई देती है। ज्ञात होता है, कि प्रकृति देवी मुग्ध होकर अपना अखिल भंडार खोल कर मध्ययुग पर न्योछावर करने को उद्यत है। जो कुछ भी हो, इस युग के बहुत से आविष्कारों ने मानव जीवन में क्रान्ति पैदा करदी है। अनेक भौतिक शक्तियां जिनका दर्शन होना असम्भव दीख पड़ता था, आज हमारे हर तरह से हाथ बटाने को तत्पर हैं। हमारी बहुत सी जटिल आवश्यकतायें अनायास पूर्ण हो जाती हैं। आविष्कारों का दौर दौरा भौतिक शक्तिओं तथा पदार्थों तक ही नहीं रह गया। आज वह समय आ गया है, कि हमको भिन्न भिन्न मानसिक शक्तिओं का अन्वेषण करने का सुअवसर प्राप्त हुआ है। मनोविज्ञान में आज कल बहुत उन्नति दिखलाई पड़ती है। सब पाश्चात्य देशों में इस विषय पर बहुत आन्दोलन हो रहा है। और नित्यप्रति नवीन २ ग्रन्थ प्रकाशित हो रहे हैं। अभी तक इस विषय को बहुत कठिन माना जाता था, लेकिन (New Psychology) नवीन मनोविज्ञान ने इस कठिनता को बहुत कम कर दिया है (W. Atkinson) ने नवीन मनोविज्ञान पर खोज-पूर्ण ग्रन्थ लिख कर जाग्रति पैदा करदी है।

जितने भी पुराने मनोविज्ञान वेत्ता हुए हैं। उन्होंने रुचि और स्मृति को प्रथक २ माना है। जेम्स, मिल, स्पेन्सर इत्यादि रुचि को प्रथक स्थान देते है, और स्मृति को भिन्न। लेकिन नवीन मनोविज्ञान वेत्ता रुचि को स्मृति की जड़ मानते

है। रुचि और स्मृति में बहुत घनिष्ट सम्बन्ध होता है। लेखक के प्रयोगों द्वारा ज्ञात हुआ है, कि रुचि या अनुराग से ८० फ़ी सदी स्मृति को आसानी पड़ती है। जो विषय रुचिकर होते हैं। उनको दुहराने की आवश्यकता कम होती है। लेकिन पाठकों को स्मरण रखना चाहिये, कि रुचि सुगम मार्ग पसंद करती है। सुगमता अज्ञात की अपेक्षा ज्ञात मे अधिक होती है। जिन पाठकों को मेरी कोरीली, डिकिन्स, प्रेमचन्द्र और डा० टैगोर के उपन्यास पढ़ने का सुअवसर प्राप्त हुआ है। वह कह सकते हैं; कि रुचि और स्मृति मे कितना अटल सम्बन्ध होता है। जब इच्छा हो, उसी समय उपन्यास की सारी घटना तथा उसके वीर और वीराङ्गनाये सामने अपना २ कृत्य कर निकलते है। इसका मनोवैज्ञानिक कारण यही है, कि श्रेष्ठ उपन्यास लेखक मनोवृत्तिओं को इतनी रोचकता के साथ लिखता है, कि अनेक प्रकार के रसों का जैसे वीर रस, करुणा रस, इत्यादि का पाठकों की मनोवृत्तिओं पर गहरा असर पड़ता है। दूसरा कारण यह भी है, कि लेखक रसों को घटना मे इतनी सुन्दरता और कुशलता के साथ व्यक्त करता है, जिससे पढ़ने वालों की मनोवृत्तिओं मे समता हो, या उनको लेखन शैली की पूर्णता के कारण प्रभावित कर लेता है। इसी से सब घटनायें इच्छानुसार हृदयस्थ हो जाती हैं।

अन्यत्र पाठकों को बतला चुके है, कि वृत्तियां बीजरूप शिशु को पूर्वजों से प्राप्त होती हैं। इसलिये इन वृत्तिओं की तरफ़ झुकाव भी स्वाभाविक होता है। और शीघ्रता से स्मरण शक्ति भी कार्य कर निकलती है। देखा जाता है, कि जिस विषय में विद्यार्थी को स्वाभाविक रुचि होती है। उस विषय को याद

करने में आसानी हो जाती है। स्वाभाविक रुचि वाले विषय को रटने की आवश्यकता नहीं होती। रुचि व्यक्तिगत होती है। विद्यार्थी जीवन में हम सब को अनुभव होता है, कि किसी को गणित से रुचि होती है, किसी को इतिहास से, और किसी को साहित्य से। मनोवैज्ञानिकों ने रुचि और वृत्ति का घनिष्ट सम्बन्ध बतलाया है। अर्थात् रुचि उन्हीं विषयों में होती है। जिनमें वृत्ति का अधिपत्य होता है। वृत्तिनुसार स्नायु शक्ति अपना मार्ग निर्णय करने को कटिबद्ध रहती है। अतः यह शक्ति अन्य स्नायुओं मे रुकावट के साथ जाती है इसी कार्य को अरुचि के नाम से पुकारते हैं। मैंने १०० से ऊपर इस सम्बन्ध में प्रयोग किये, लेकिन सब प्रयोगों का फल उपरोक्त ही निकला।

कभी २ यह भी देखा जाता है, कि नवीन और विचित्र पदार्थों को देखना भी रुचिकर होता है। कोई पदार्थ नवीन या अद्भुत होने से स्मृति ग्राह्य नहीं हो सकता, सब मानसिक क्रियाओं का पूर्ण होना ज़रूरी होता है। विचित्रता से और नवीनता से रुचि कुछ सेकिन्ड के लिए मोल ली जा सकती है। लेकिन इस क्षणिक रुचि में और स्वाभाविक रुचि में बहुत अन्तर है। स्वाभाविक रुचि में अवधान या ध्यान के ज़ोरदार तन्तु होते हैं। जब तक अवधान (Attention) न होगा। उस समय तक स्नायु शक्ति चेतन्य केन्द्रों को पार न कर सकेगी। और पुराने सम्बन्ध भी स्थापित न हो सकेंगे। पुराने सम्बन्धों को रुचि के साथ स्थापित करना ही, किसी विषय को याद करना ही

सकता है पुराने मनोवैज्ञानिक ध्यान की अवधि $\frac{१}{१००}$ से $\frac{१}{५}$ सेकिन्ड तक मानते थे लेकिन आज कल यह निश्चय किया गया है, कि अधिक से अधिक ध्यान दो या तीन सेकिन्ड तक ही विना किसी विक्षेप के लगाया जा सकता है। और ४ से लगा कर ६ या ७ वस्तुएँ या अक्षर पहिचाने जा सकते हैं। जितने अक्षर एक दम ज्ञात हो जायँ समझ लेना चाहिये, कि उतना ही व्यक्ति ध्यान को एकाग्र रख सकता है। रुचि, अवधान और जिज्ञासा के कथन को एक प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक के शब्दों द्वारा प्रकाशित किया जाता है (Curiosity as an instinct or impulse produces in consciousness a concentration of activity called attention and feelings accompanying the act called interest) जिज्ञासा या विचित्रता के आवेग वृत्ति स्वरूप चैतन्यता मे एकाग्रता पैदा करते है जिसको अवधान कह सकते हैं। कार्य करने की जाग्रति का नाम रुचि है। जब हम अपनी स्नायु शक्ति को प्रबलता के साथ किसी कार्य में व्यवहृत करते हैं। उसी समय जाग्रति होती है।

आगे चलने के पहिले हम पाठकों को यह दिखलाना चाहते है कि नवीन विषय कब स्वाभाविक रुचिकर हो सकते हैं। नवीन विषय उसी समय रुचिकर हो सकते हैं। जब कि उन में आशा जनक तन्तु होंगे। या ज्ञान पिपासा को तृप्त करने की सामिग्री उपस्थित होगी। या अरुचिकर विषय को रुचिकर विषय के साथ सम्बन्धित कर देने से ऐसे विषय भी रोचक हो जाते हैं। इस को कृतिम विधि (Grafting process) के नाम से पुकारते हैं। उदाहरणतया किसी को इतिहास से और किसी को गणित से अरुचि है। लेकिन भाग्यवश उसकी

जीविका ही उक्त विषयों पर निर्भर हो, तो व्यक्ति को अरुचि विषय भी रुचिप्रद हो जाते हैं। यह दशा कुछ ऊँची अवस्था में हो सकती है। छोटे २ बच्चों से हम अखीरी विधि का उपयोग करने के लिये आशा नहीं कर सकते। छोटे २ बालकों के लिए सब से अच्छा उपाय यही है कि उनको रुचिनुसार ही विषय को स्मरण करना चाहिये। ज्ञान वृद्धि के साथ २ नवीन विषय या अरुचिकर विषय भी आसानी से रुचि वाले विषयों के साथ २ स्मरण किये जा सकते हैं। किसी विषय के भिन्न २ रूप को समझाने से भी प्रत्येक विषय रोचक हो जाया करते हैं। यह कार्य अध्यापक की योग्यता पर निर्भर होता है। जहां तक हो सके, इन्द्रियों को किसी विषय पर विवस नहीं करना चाहिये विषय की रोचकता पर ध्यान देने से बहुत सुगमता हो जाती है।

पड़ता है। यह क्रिया रुचिकर उसी समय हो सकती है, जबकि सत्य प्राप्त करना हमारा लक्ष होता है। मुझे आश्चर्य होता है, कि जनता ने यह जन्म सिद्ध अधिकार क्यों और कब छोड़ा। मेरी समझ में जीवन की गणना ही सत्य से होनी चाहिये। हमें उस समय की शीघ्र प्रतीक्षा करनी चाहिये, जब हमारे जन्म दिन के समय भी सत्य की गणना हुआ करेगी। सच्चा विद्यार्थी जीवन इसी का नाम है।

पाठकों को सुन कर आश्चर्य होगा, कि सत्य जितना विशुद्ध, सरल और सरस होता है। उतना ही वह रुचिप्रद और आसानी से मनसा में धारण भी हो सकता है। स्मरण करने के लिये अधिक परिश्रम भी नहीं करना पड़ता है। जितने भी वैज्ञानिक और तत्ववेत्ता हुये हैं। उन्होंने सत्य की खोज करने में जीवन तक व्यतीत कर दिया।

रुचि बढ़ाने के केवल दो ही मार्ग हैं। पहिला ज्ञान, दूसरी सहानुभूति, इसको फ्रेडरिक हर्बर्ट निम्न श्रेणी में विभाजित करता है:—

ज्ञान में		सहानुभूति में
अनुभव द्वारा रुचि	...	जातीय रुचि
मनन द्वारा रुचि	...	धार्मिक रुचि
लालित्य द्वारा रुचि	...	सहानुभूतिक रुचि

वह कहता है कि:—When mind becomes concentrated on the future more than the present interest passes into desire. Attention and strong expectation are

conditions of interest and demand action of desire. जब मस्तिष्क भविष्य पर एकाग्र हो जाता है उस समय अनुराग इच्छा में बदल जाता है ध्यान और बलवान आशा से रुचि बढ़ती है और कार्य करना पड़ता है।

रुचि और सविकल्पक प्रत्यक्ष ज्ञान

मनुष्य को जितना ज्ञान प्राप्त होता है, वह सब भिन्न २ ज्ञानेन्द्रियों द्वारा ही हो सकता है। इतना अवश्य मानना पड़ेगा, कि इन इन्द्रियों को ज्ञान धारण करने की योग्यता विशेषतः वंश परम्परा गत से मिलती है। बहुत से साधनों से यह शक्ति किसी सीमा तक बढ़ सकती है। इस प्रकार उपलब्ध किये हुए ज्ञान को मनोविज्ञानवेत्ताओं ने दो मुख्य भागों में बांटा है। पहिले को निर्विकल्पक प्रत्यक्ष ज्ञान या कम्पन (Sensation) और दूसरे को सविकल्पक प्रत्यक्ष ज्ञान या आभास Perception कहते हैं। निर्विकल्पक प्रत्यक्ष ज्ञान उस तरंग का नाम है, जिसका मतलब हमारी समझ में नहीं आता। इस ज्ञान की अवस्था को अर्ध चेतन (Sub-conscious state) भी कहते हैं। यह ज्ञान सविकल्पक प्रत्यक्ष ज्ञान का जन्मदाता है। सविकल्पक प्रत्यक्ष ज्ञान व्यक्ति को उस समय उपलब्ध होता है, जब कि मनसा की धारणा-शक्ति बढ़ जाती है। ८ या ९ वर्ष की आयु से इस ज्ञान का प्रारम्भ होता है। किसी भाव को केवल शब्दों द्वारा प्रकाशित करना ही, सविकल्पक प्रत्यक्ष ज्ञान कहलाता है। बन्दूक की अवाज़ सुनते ही, उस शब्द को बन्दूक की आवाज़ कह कर प्रकाशित करना। लेकिन जब हम किसी भाव की तुलनात्मक दृष्टि से आलोचना करते हैं। या विशलेषण और संश्लेषण करते है। उस समय उक्त भावना की एक अवस्था हो जाती है। जिसको समवधारण (Conception) कहते हैं। तत्ववेत्ता फ़ाउलर सविकल्पक प्रत्यक्ष ज्ञान की और समवधारणा

की उत्पत्ति प्रतिमाओं (Imagination) द्वारा बतलाता है। बहुत से मनोवैज्ञानिक अन्वेषणों से भी ज्ञात होता है, कि जिसको हम रुचि के नाम से सम्बोधन करते हैं। उसमें सविकल्पक प्रत्यक्ष ज्ञान और सामान्य प्रत्यय में बहुत गहरा सम्बन्ध होता है।

जब तक सविकल्पक प्रत्यक्ष ज्ञान न होगा, उस समय तक रुचि का साधारणतया होना असम्भव होता है। जब रुचि का कार्य अपूर्ण है। तब हम स्मृति की कल्पना नहीं कर सकते। यद्यपि बलात्कार करें भी और मनः संयोग अकस्मात् स्थापित भी हो जाय। वह अल्प समय का ही हो सकता है। इस प्रकार के मन संयोग अर्थात स्मृति से स्नायुओं को बहुत परिश्रम करना पड़ता है। इसलिये यह कार्य स्वास्थ्य प्रद नहीं। रुचि के साथ विषय को ग्रहण करना मानसिक तथा शारीरिक दृष्टि से लाभदायक होता है। स्नायु शक्ति भी क्षीण नहीं होती। उसकी गति भी सन्तोष जनक होती है। शिक्षा प्रणाली तथा शिक्षा विशारदों का सब से पहिले यही अभीष्ट होना चाहिये, कि विद्यार्थी की स्वाभाविक रुचि किस रीति से जाग्रत की जा सकती है। जिस विषय को हृदस्थ करना हो प्रथम रुचि का ही उपयोग होना चाहिये।

पाठक देख चुके हैं कि सविकल्पक प्रत्यक्ष ज्ञान का सारा भार प्रतिमाओं पर और निर्विकल्पक प्रत्यक्ष ज्ञान पर आश्रित होता है। इस लिये शिक्षकों को और विद्यार्थियों को ध्यान में रखना चाहिये, कि वह सविकल्पक ज्ञान को दूसरी ज्ञानेन्द्रिओं के साथ २ दृष्टि यन्त्र (Optic Thalami) अर्थात् नेत्रों द्वारा प्राप्त करने की अधिक कोशिश करें। क्योंकि उक्त क्षेत्र में एक मुख्य स्नायु आवेगों को आसानी से मस्तिष्क की तरफ ले-

जाती है। जितना अधिक एकाग्रता के साथ किसी पदार्थ को अथवा विषय को देखा जायगा। उतनी ही विशेषता प्राप्त होने की कल्पना, नहीं २, सम्भावना की जासकती है। तत्ववेत्ताओं में यही भावना या नैसर्गिक वृत्ति होती है, कि वह गहिरे और संतोषी विषय अथवा पदार्थ दृषक होते हैं। सविकल्पक प्रत्यक्ष ज्ञान को उपलब्ध करने की दूसरी कसौटी यह है, कि अमुक आवेग कितनी ज्ञानेन्द्रिओं के योग से मिला है। इसमें बहुत से पुराने मनोवैज्ञानिकों मे मत भेद है। डा० वेन ब्रायुन मिल इत्यादि किसी रूप में इस कथन का समर्थन करते हैं। आज-कल के मनोवैज्ञानिक हमारे मत से सहमत हैं। जितनी इन्द्रियों का योग होगा। उसी अनुपात से विषय की आन्तरिक तुलना हो सकेगी। उदाहरणतया जब व्यक्ति गुलाब के पुष्प का सविकल्पक प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करता है। पुष्प को केवल साधारण दृष्टि से देखने के साथ २ ज्ञान दृष्टि अथवा ज्ञान नेत्रों से भी देखना चाहिये। ज्ञान दृष्टि से अभिप्राय यह है, कि मस्तिष्क कोण का भी उपयोग करना ठीक होता है। पुष्प की दूसरी श्रेणी के पुष्प के साथ तुलना करनी चाहिये। तत्पश्चात् यह खोज करनी चाहिये, कि उसके रंग आकार तथा पत्तिओं में क्योंकर अन्तर है। उसकी मधुर और मीठी सुगंध का क्या कारण है। इसी प्रकार किसी राजनैतिक या धार्मिक विषय की गवेषणा करनी चाहिये। अमुक घटना का परिणाम क्या होगा। ऐतिहासिक तथा वैज्ञानिक सम्बन्ध क्या है।

जितने भी रंगों के दर्शन होते हैं। उनकी उत्पत्ति प्रायः सूर्य्य की किरणों के द्वारा होती है। वह सदैव लाल, हरी, पीली, नीली, नारंगी बेजनी, सफ़ेद सात रंगों की होती है। इन रंगों का ठीक दिग्दर्शन

वर्षाऋतु में धनुष से हो सकता है। इस अखिल सांसारिक वृक्षों, पुष्पों, जानवरों, और पदार्थों में, इन्ही रंगों का समावेश होता है। प्रत्येक विषय अपनी २ योग्यतानुसार उपरोक्त रंगों को ग्रहण करता है। इसी प्रकार सब तरह की सुगंध जैसे खट्टी, मीठी, कड़वी और चरपरी इत्यादि इस जगत् जननी पृथ्वी से प्राप्त होती है। अपनी २ योग्यतानुसार प्रत्येक पदार्थ इसको दूर दूर से अपनाता है। इसी तरह के प्रश्नों के उत्तर ढूंढ निकालना, ज्ञान दृष्टि अथवा ज्ञान नेत्रों का कार्य होता है। यह सत्य है। और साधारण योग्यता से परे है, कि इन सब प्रश्नों का उत्तर ठीक तरह से देसके। लेकिन अपनी २ योग्यता नुसार इन प्रश्नों का उत्तर देना असंगत नहीं होसकता। इन उत्तरों से सविकल्पक प्रत्यक्ष ज्ञान की वृद्धि अवश्य हो सकती है। इस वृद्धि से स्मृति भी जाग्रत होजाती है।

इस स्थल पर यह निर्णय करना कठिन है, कि सविकल्पक प्रत्यक्ष ज्ञान रुचि को प्रदान करता है। या रुचि द्वारा सविकल्पक ज्ञान मिलता है। हम स्वीकार करते हैं, कि ज्ञान द्वारा रुचि की वृद्धि अवश्य होती है। लेकिन ज्ञान रुचि का जन्म दाता नहीं हो सकता, किसी प्रसंगानुसार पाठकों को परिचित करा चुके हैं, कि रुचि सम्बन्ध बीज परम्परा गत संस्कारों से होता है। इस विषय पर अन्तःकालान्त उदाहरण भी दिये जा चुके हैं। मनोविज्ञान अभी अपूर्ण अवस्था में है। इस लिए विषय को अधिक स्पष्ट न कर, इतना कहना ही पर्याप्त हो सकता है, कि जिस प्रकार क्षय और त्रिशित रोग इत्यादि के कीटाणु, वंशजों

में मिलते हैं। उसी प्रकार पूर्वजों की भावना रूपी रुचि के कीटाणु वंशजों को भी प्राप्त होते चले आरहे हैं। अतः यह कहना सतर्क है, कि रुचि एक विशेष भावना है। जिसका स्रोत पूर्वजों की भावनानुसार होता है। इस की गति व्यक्तिगत मानी जा सकती है। यथा किसी की रुचि गणित में होती है। किसी की वनस्पति शास्त्र से होती है। किसी को कविता से, और किसी को विज्ञान से। जितनी २ मनोविज्ञान की खोजें की जावेंगी। उसी अनुपात से इस विषय पर प्रकाश डाला जा सकेगा।

जितना व्यक्ति का अनुभव बढ़ा हुआ होगा। उसी गति के अनुसार सविकल्पक प्रत्यक्ष ज्ञान मिल सकता है। जब ज्ञान की कमी होगी, तब ही सविकल्पक प्रत्यक्ष ज्ञान को रुकावट होगी। ज्ञान की कमी इच्छा शक्ति की निर्बलता की भी सूचक समझनी चाहिये। मन और इच्छा शक्ति में बहुत कम अन्तर है। कितने ही मनोवैज्ञानिक इस अन्तर को नहीं मानते। मन का कार्य संकल्प और विकल्प करना होता है। इच्छा शक्ति भी इसी विधि का पालन करती है। मनोव्योपार से ज्ञान की वृद्धि होती है। इस लिए संकल्प और विकल्प करना भी ज्ञान भंडार को बढ़ाने का रास्ता समझना चाहिये। संकल्प और विकल्प से सविकल्पक प्रत्यक्ष ज्ञान की भी शुद्धि होती है। मन की यह शक्ति न होती। उस समय मनुष्य जाति की भी वही दशा होती, जो कि जानवरों की है। ज्ञान का अखिल भंडार होते हुए भी, उसको सजीव या सतेज संकल्प और विकल्प द्वारा ही किया जाता है। हम एक नीम के वृक्ष को देखते हैं, और जानते हैं, कि यह नीम का पेड़ है। लेकिन जब उसकी व्याख्या करने

पेठते हैं। उस समय उसके गुणों पर उसके फल और पत्ते इत्यादि के रंग रूप पर ध्यान देने की आवश्यकता होती है। विषय की व्याख्या करना या तर्क द्वारा प्रमाणित करने से भी कितनी ही भावनाओं का विकास हो जाता है। सविकल्पक प्रत्यक्ष ज्ञान की भी चौगुनी से कुछ कम गति से शुद्धि होती है।

प्रतिमा और भावना
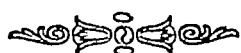
पाठक अन्यत्र देख चुके हैं, कि जैसी शारीरिक बनावट पेचीदा है, उसी प्रकार उसका भिन्न २ कार्य और मनो व्यौपार भी जटिल है। इसका ठीक २ पता लगाना बहुत ही कठिन है। उनका कारण विशेष अवश्य ही होता है। इसी तरह प्राकृतिक घटनाओं की भी दशा है। यह सदैव किसी नियमों और उप-नियमों का पालन करतीं हैं। मनुष्य जाति अपनी मानसिक स्वतन्त्रता के कारण कुछ घटनाओं को समझ सकती है। और बहुतसी घटनाओं के कारणों का अनुमान भी कर सकती है। प्राकृतिक शक्तियों की नाप तौल की जा सकती है। लेकिन मानसिक शक्तियों की यह क्रिया कदापि ठीक नहीं हो सकती। दार्शनिकों ने जितना मनुष्य शक्तिशाली और भविष्य निर्णय करने में स्वतन्त्र माना है। बहुत सी जीवन की जटिलताओं के कारण वह निर्बल भी कुछ कम नहीं है। हम किसी बालक को सम्बृद्धिशाली सम्पर्क या प्रतिवेस में रख सकते हैं, लेकिन सहसा यह निश्चय नहीं कर सकते, कि बालक उस सम्पर्क से कितना लाभ उठा सकता है। और न उस लाभ की नाप ही कर सकते हैं। बच्चे को बलात्कार हम पाठशाला में लेजा सकते हैं। उसके सामने पुस्तक खोल कर रख सकते हैं, लेकिन उस पुस्तक को पढ़ना सदैव बच्चे के अधिकार में है। इसी प्रकार किसी जान-वर को वलात्कार तालाब के निकट लेजा सकते हैं, लेकिन उस-को पानी नहीं पिला सकते। यह कार्य पूर्ण रूप से या संतोष-

जनक व्यक्ति की इच्छानुसार ही हो सकता है। व्यक्ति को जब आन्तरिक प्रेरणा या भावना होगी। उसी समय वह किसी कार्य की तरफ़ झुक सकता है।

मनोवैज्ञानिकों ने बहुत सी प्रारम्भिक भावनाओं को वृत्ति और प्रवृत्ति के नाम से पुकारा है। कोई २ इनको प्राकृतिक शक्तियों के नाम से भी विख्यात करते हैं। डरना, सहचर्य्य, अनुकरण करना, खेलना, ज़िद करना, मोह, (ममता) जिज्ञासा, (विचित्रता) विधायकता, इत्यादि। जितने भी मनुष्य जाति के प्राणी होंगे, उन सबही में यथा योग्य यह भावनायें अवश्य ही होंगी। जब कोई व्यक्ति भयानक जंगली जीव को देखता है, उस समय डरना स्वाभाविक ही हो सकता है। सब ही जीवधारियों को समाज में रहने की भावना होती है। इसी प्रकार हमारे सामने कोई आश्चर्य्यजनक पदार्थ आता है, उस समय हम उसकी विचित्रता को देखने के लिये अनायास ही उत्सुक हो जाते हैं। मनुष्य जाति में खेल प्रवृत्ति बहुत पुरानी है। इस प्रकार की भावनाओं को यदि हम आदि भावना कहें, तो भी कुछ अनुचित न होगा। ऐसी भावनाओं का विकास हमारी बाल्यावस्था में ही होजाता है। बहुत सी नवीन भावनायें एक दूसरे के संसर्ग से ही उत्पन्न हो जाया करती हैं। ललित कलाओं की उत्पत्ति, तथा उनकी रक्षा करना, औषधि द्वारा अपनी रक्षा करना, अनुभव प्राप्त करना, और उससे लाभ उठाना, सहानुभूति करना, दूसरों का भला सोचना, इत्यादि।

जैसा कि पाठक पहिले देख चुके हैं, कि मस्तिष्क में सेल (Cell) और पुंकणों की वृद्धि के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति की भावनाओं में विकास हो सकता है। मनुष्य जाति में भावनाओं

बहुत कुछ हो सकती है। व्यक्ति जितना अधिक सभ्य भावना वाला होगा, उतना वह ज्ञान युक्त और चतुर हो सकता है। पशु श्रेणी के जीवों में केवल इतना ही अन्तर है, कि वह भावनाओं की वृद्धि नहीं कर सकते। इन जीवों में वृत्ति और प्रवृत्ति ही अधिक होती है। अस्तु अब हम यह बतलाना चाहते हैं, कि मनुष्य की वृत्तिओं में किस प्रकार अन्तर हो जाता है, और वह अन्य भावनाओं की जड़ कैसे समझनी चाहिये। मनुष्य में डर वृत्ति बहुत पुरानी है। उसकी उत्पत्ति प्रायः उस समय से मानी जाती है। जब इस जाति को जंगलों में रह कर अपना जीवन व्यतीत करना पड़ता था। डाकुओं और अन्य भयानक मांसाहारी जानवरों का सामना करना पड़ता था। जब मनुष्य में इस वृत्ति की उत्पत्ति हुई, उसी समय से इस भय से बचने और अपने प्राणों की रक्षा करने की भी भावना उत्पन्न हुई। और नाना प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों का भी आविष्कार किया गया। कितने ही और साधनाओं की भी उत्पत्ति हुई। जैसे गृह निर्माण करना, समाज बना कर गावों और शहरों में रहना इत्यादि। इस कारण से कलाओं में भी उन्नति हुई। शिक्षा सम्बन्धी साधनों का भी स्थापन किया गया। पाठक स्वयम् अनुमान कर सकते हैं, कि भावनाओं की वृद्धि किस प्रकार हुआ करती है। भावनाओं की वृद्धि और उनके साधनों का ही नाम सभ्यता है।

कुछ मौलिक भावना सम्बन्धी विवेचन से यह और स्पष्ट हो जायगा; कि अमुक भावना का मानसिक आधार क्या है। कितने ही मनोवैज्ञानिकों ने मानसिक विकृति का कारण अंतःक्षोभ (emotion) माना है, और प्रत्येक वृत्ति

और प्रवृत्ति के साथ अंतःक्षोभ का होना अनिवार्य्य होता है। जेम्स इस मत का बहुत कुछ समर्थन करता है। जितनी इस अन्तः क्षोभ में रुकावट अथवा बाधा होगी, उतना ही मनोविकार अधिक होगा। और व्यवसायात्मक प्रेरणा भी तीव्र होगी। हम देखते है, कि बच्चे को कोई नवीन वस्तु विशेषत. मिष्ठान की इच्छा होती है मीठा देख कर खाने की घोर इच्छा हुई। लेकिन जितना ही बालक को मीठा खाने मे बाधा होगी, उतना ही वह अधिक रोवेगा। अर्थात अन्तःक्षोभ बढ़ेगा। लेकिन ज्योंही बालक को मीठा प्राप्त हो जायगा। अन्तःक्षोभ शान्त हो जायगा। साथ ही साथ बालक की व्यवसाय (will) रूपी प्रेरणा भी शान्त हो जायगी। प्रत्येक भावना और व्यवहारिक कार्य की उत्पत्ति स्थान अन्तःक्षोभ मानना पड़ता है। जितना अन्तःक्षोभ रूपी आवेग तीव्र होता जाता है, निर्विकल्पक प्रत्यक्ष ज्ञान बढ़ता जाता है। इस ज्ञान को प्रायः इन्द्रियों द्वारा अनुभव कर सकते हैं। इस ज्ञान के बारे मे अन्य लक्षणों के साथ २ निस्तब्धता भी एक चिन्ह होता है। इन्द्रियां किसी किसी विषय का आभास कर सकती है। लेकिन उस विषय की पूर्व ज्ञान के साथ तुलना नहीं की जा सकती। निर्विकल्पक प्रत्यक्ष ज्ञान में हम कोई भी निर्णय नहीं कर सकते। क्यों कि चेतना का अभाव होता है।

प्रतिमा बना सकता है। अपने पूर्व अनुभव के साथ अपूर्ण तुलना भी कर सकता है, लेकिन व्यवसाय रूपी भावना जाग्रत् नहीं होती है, अगर इस ज्ञान मे घोर आशा के साथ २ इच्छा शक्ति भी प्रबल हुई, उस समय इस ज्ञान द्वारा कर्मेन्द्रियां कुछ कार्य कर सकतीं हैं। इच्छा शक्ति घोर आशा करने से अधिक बढ़जाती है, इसको बढ़ाने में किसी विषय का चिन्तन भी सहायता करता है। उपरोक्त दोनों ज्ञानों को विचार द्वारा बढ़ा सकते हैं, अगर कोई व्यक्ति किसी विषय को जानना चाहता है, तो उसका नित्यप्रति चिन्तन अवश्य होना चाहिये। यह सब से बड़ा मानसिक नियम है। जितने भी प्रतिभाशाली व्यक्ति हुए हैं। वह उच्च श्रेणी के विचारवान् अवश्य थे। न्यूटन, सौक्रटीज़ इत्यादि किसी विषय पर विचार किया करते थे, जब तक कि वह विषय पूर्णतया सुलझ नहीं जाता था। न्यूटन के बारे मे कहा जाता है, कि वह महीनों तक एक ही विषय को सोचता रहता था। सत्य की सीढ़ियां होती हैं। शनैः २ विचार द्वारा हम सत्य की एक २ सीढ़ी पर चढ़ा करते है, जितनी अधिक विचार द्वारा सीढ़ियां पार कर लेते हैं, उतना अधिक सत्य प्राप्त हो जाता है।

सामान्य प्रत्यय (Concept) भाव की चौथी श्रेणी होती है, यह भी निरन्तर विचार द्वारा ही प्राप्त होती है। इस श्रेणी को मनोवैज्ञानिक विचार की पूर्णावस्था कहते है। इस स्थान पर प्रतिमाये पूर्ण चेतन रूप धारण कर लेती है। हमारा भाव अनुभव और संचित ज्ञान युक्त होता है। किसी विषय का अनुसन्धान हो सकता है। क्यों कि प्रतिमाये स्पष्ट हो जातीं हैं। इस लिए विषय का स्मरण भी आसान हो जाता है। सम

वधारण (Conception) स्मृति का बहुत बड़ा सहायक समझना चाहिये। गणित के कठिन प्रश्नों को हम उस समय तक हल नहीं कर सकते, जब तक पूर्ण रूप से समवधारण (Conception) न हो। प्रश्न समवधारण के पश्चात् ही स्मर्ण हो जाता है। मानसिक चित्रण ही स्मर्ण शक्ति की पहिली शर्त होती है। और किसी विषय की प्रतिमायें उस समय तक नहीं बन सकतीं, जब तक कि सारी उपरोक्त मानसिक क्रियायें अर्थात् अन्तः क्षोभ (Emotion) निर्विकल्पक प्रत्यक्ष ज्ञान (Sensation) सविकल्पक प्रत्यक्ष ज्ञान (Perception) और समवधारण (Conception) न हो।

स्मृति के कुछ मौलिक नियम

प्रकृति का नियम इतना अटल और सम्पूर्ण है, कि इसमें ...धारणतया कभी भी त्रुटि नहीं हो सकती। जितने कार्य होते रहते हैं, उन सब का कुछ न कुछ अचल नियम अवश्य ही होता है। महा कवि टेनीसन ने अपनी छोटी सी अमूल्य रचना में गम्भीर भाव व्यक्त किया है:—

God is law, say the wise, if he thunders by law, the thunder is yet his voice.

बुद्धिमानों का कहना है, कि ईश्वर एक नियम है, अगर वह गर्जना करता है, तो यह गर्जना भी उसी की ही आवाज़ होती है। इसी प्रकार बहुत से हमारे मानसिक व्यापारों पर प्राचीन काल से अभी तक बहुत कुछ विचार होता चला आरहा है। कितने ही तत्व विशारदों ने मानसिक वृत्तिओं का पूर्ण अनुसन्धान किया है। सब से पहिला तत्व-वेत्ता स्पनोज़ा हुआ है। उसने बहुत कुछ मानसिक खोज के पश्चात् यह निर्णय किया है, कि सारी मानसिक क्रियायें सदैव नियमों का पालन किया करती है। इन्हीं नियमों के अनुसार समाज का पठन पाठन भी होना चाहिये। मध्ययुग में मिल, जेम्स, रूसो, स्पेन्सर, हेमिल्टन, इत्यादि ने बहुत से नियम बतलाये, विशेषतः तर्क शास्त्र पूर्णतया मानसिक नियमों पर रचा गया है। हमारे यहां भी ऋषियों ने मानसिक नियमों पर पूर्ण प्रकाश डाला है। कपिल, व्यास, इत्यादि का इस सम्बन्ध में बहुत ऊंचा स्थान है। मनुष्य समाज

उनका सदैव ऋणी रहेगा। अगर हमारे मानसिक व्यौपारों का स्थाई नियम न होता। और आर्जित ज्ञान मस्तिष्क में वेतरतीबी से पड़ा रहता। उस समय मनुष्य समाज को अकथनीय कठिनाइयों का सामना करना पड़ता। सम्भवतः ज्ञान की इस समय इतनी ऊंची अवस्था न होती। मनुष्य पूर्ण होने के लिये प्रयत्न करता चला आ रहा है। यह लोकोक्ति भी चरितार्थ न होती। रोज़ की सर्व कार्य भी पूर्ण न हो पाते। शारीरिक कठिनाई अपार हो जाती। प्राकृतिक नियमों को देख कर मुग्ध होना पड़ता है। एक क्षण भी वे नियम नहीं हिल सकता। इसी प्रकार मानसिक जगत की दशा होती है। जीवन की जटिलता मानसिक नियमों की सहायता से न्यून से न्यून हो जाती है। जितने भी कुशाग्र बुद्धिमान तथा विद्वान हुए हैं। उन सब ने कठिन कार्य अपनी मानसिक सबलता के आधार पर हल किये हैं। तत्व विशारदों के सारे गहन अन्वेषण मानसिक नियमों की शुद्धता पर ही अवलम्बित होते हैं। जिस किसी को बुद्धिमान तथा प्रतिभाशाली बनना है। उसको चाहिये, कि मानसिक नियमों की सहायता से कार्य करना सीखे। इन नियमों की अवहेलना करने पर मनुष्य जाति का कोई भी कार्य सन्तोष जनक नहीं हो सकता।

स्मरण शक्ति और बुद्धि हमारे लिए सर्व श्रेष्ट मानसिक शक्तियां हैं। इनकी अनुपस्थिती में मनुष्य समाज का कोई कार्य नहीं चल सकता। यही नहीं इसको अन्य थलचर पशुओं के हड़प कर गये होते। मनुष्य समाज स्मृति द्वारा अनुभव सम्पादन करता है। दुःखदाई अनुभव से बचने की कोशिश करता है, और लाभदायक अनुभव से अपनी जीविका उपार्जन

करता है, बुद्धि की सहायता से भले और बुरे की पहिचान करता है। कितने ही विद्वानों ने बुद्धि को चेतना (Consciousness) के नाम से सम्बोधन किया है, और इसका बिकास परम्परागति से माना जाता है, सूपनहेर होमवोल्ट, स्पेन्सर इत्यादि की भी यही धारणा है। स्मरण शक्ति को भी वंश परम्परा गति आर्जित शक्ति मानना श्रेयकर प्रमाणित हो सकता है।

क्यों कि स्मरण शक्ति द्वारा जनता के शत प्रति शतः कार्य हुआ करते हैं, इस लिए कितने ही समुन्नत देशों मे इस मानसिक शक्ति पर बहुत से प्रयोग किये गये। पाश्चात्य द्वीप में सबसे प्रथम स्मृति को बढ़ाने वाली कृत्तिम पद्धति (Mnemonics) प्रचलित थीं। प्रारम्भिक दशा मे स्वर और व्यंजनादिकों का ज्ञान विख्यात चित्रों के सहारे कराया जाता था। जिस प्रकार आदमी का चित्र दिखाकर "आ" का बोध और ईख के पौधे को दिखला कर "ई" का बोध आज कल भी पहिली कक्षाओं मे कराया जाता है। इसी प्रकार उपरोक्त रीति में क़रीब २ एक सौ सुविख्यात चित्रों द्वारा बच्चे को बहुत कुछ परिचय करा दिया जाता था। बाल्यावस्था में इस प्रकार के पठन पाठन से बहुत कुछ सरलता हो जाती है। और स्मृति के विकासक का मार्ग खुलजाता है। लेकिन कृत्तिम स्मृति पद्धति में और आज कल के विख्यात स्मृति नियमों में बहुत कुछ परिवर्तन होगया है। पुराने स्मृति के नियमों में और उपस्थित नियमों में मौलिक अन्तर नहीं है; अन्तर केवल समुन्नत समय का ही दीख पड़ता है। जिसको आज कल मनोविज्ञान में सहयोग विधि या विचार सम्बन्ध विधि कहते हैं। वह कृत्तिम स्मृति पद्धति की नींव पर ही स्थापित की गई है।

मध्ययुग में स्मरण शक्ति का महत्व बहुत कुछ बढ़ गया है, परिणामतः इस विषय में कितने ही मनोवैज्ञानिकों ने बहुत कुछ छान बीन करके, कतिपय स्मृति के मौलिक नियम प्रस्तुत किये हैं। जिनकी सहायता से विद्यार्थियों का एवं सर्व जनता का शारीरिक और मानसिक श्रम कम हो सकता है।

प्रायः मध्ययुग के सब ही मनोवैज्ञानिक मानते हैं, कि हमारी भिन्न २ ज्ञानेन्द्रियों की सहायता द्वारा ही ज्ञान प्राप्त हो सकता है। अर्थात् ज्ञानेन्द्रियों को ही अनुभव तथा ज्ञान प्राप्त करने का स्रोत मानना ठीक है। जो कुछ सन्देश इन इन्द्रियों द्वारा मिलता है वह किसी न किसी रूप में पुनर्जीवित हो सकता है। इस पुनर्जीवन नियम को ही स्मृति कह सकते हैं। डा० बैन कहता है, कि प्रत्येक मानसिक आवेग हमारे स्नायुओं को एक दूसरे ही रूप में छोड़ जाता है। स्नायुओं का दूसरा रूप ही किसी कल्याणकारी सृष्टि की भविष्य में रचना कर सकता है। इस से हम को सांकेत मिलता है, कि इन्द्रियों में यह शक्ति उपस्थित है, जिससे हम किसी विषय को धारण कर सकते हैं। विषय को गृहण करना हमारे स्नायुओं का पहिला कार्य है। और उसी विषय को मानसिक रीति से पुनर्जीवित करना दूसरी मानसिक क्रिया है। प्रत्येक मनोवैज्ञानिक आज कल स्वीकार करते हैं, कि बहिर्वाही (Efferent) और अन्तर्वाही (Afferent) नाड़ियों को दोनों ही कार्य प्रथक् २ करने पड़ते हैं। अस्तु स्मृति में हम सब को दो प्रकार के मानसिक श्रम करने पड़ते हैं। विषय को धारण करना और उसको पुनर्जीवित करना। इन मानसिक कार्यों में हमारे हृदय और मस्तिष्क दोनों ही का योग होना है। स्मृति का स्थान मस्तिष्क है। चेतना

द्वारा मस्तिष्क विषय को ग्रहण करता है। इस चेतना का स्थान वृहत् मस्तिष्क (Cerebrum) में (Gangolia) गोल नाड़ी के समीप होता है, जितना विषय इस चेतना को स्पष्टतया प्राप्त होगा, उसी अनुपात से विषय की पुनर्वृत्ति हो सकती है। इच्छानुसार उक्त विषय को दुहरा सकते हैं। इच्छा शक्ति का कार्य यही है कि वह आवश्यकतानुसार प्राप्त किये हुए विषय का उपयोग करे।

जैसा कि पहिले कह चुके हैं, कि जर्मनी के एेविङ्ग हाउज़ (Ebbinghous) विद्वान ने स्मृति के सम्बन्ध में बहुत कुछ अनुसन्धान किया है। इसी प्रकार वुलवज़ (Wolves) ने रोचक प्रयोग किये, और बहुत कुछ इस विषय पर सामिग्री जनता के लिये छोड़ी है। स्मरण शक्ति का सम्बन्ध अवस्था के साथ बहुत ही घनिष्ट होता है, ६ वर्ष तक स्मरण शक्ति की गति बहुत कम होती है, लेकिन स्थाई अवश्य होती है। बाल क्रीड़ा जरावस्था तक याद रहती है। ७ वर्ष की अवस्था से स्मृति का विकास होना प्रारम्भ हो जाता है, १३ या १४ वर्ष की आयु तक केवल मस्तिष्क और ज्ञानेन्द्रियों में सबलता होती है, १४ से १८ या २० वर्ष की अवस्था तक स्मृति की अधिक वृद्धि होती है, और २५ वर्ष तक वृद्धि का कार्य पूर्ण हो जाता है। २५ वर्ष की आयु तक स्मरण शक्ति की दशा ठीक रहती है। तत्पश्चात् उसका ह्रास होना शुरू हो जाता है। पहिले कथनानुसार ज्ञानेन्द्रियों की सबलता ही स्मृति की सहायक होती हैं, क्योंकि जितनी यह इन्द्रियां सबल होंगीं, उतनी अधिक प्रबल प्रतिमायें, रुचि, और अवधान क्रिया होगी। स्नायुओं की सबलता मस्तिष्क की स्वस्थ्य पर निर्भर है। हमारा

भेजा अर्थात सफेद और भूरा पदार्थ वृद्धावस्था में $\frac{१}{२}$ सेर कम हो जाता है। अतः स्मरण शक्ति की कमी का मुख्य कारण भेजे की कमी ही होती है।

समय की गति भी स्मृति के लिये बहुत आवश्यक होती है। समय के व्यतीत होने से विस्मृति भी अधिक बढ़ती जाती है। लेकिन नित्यप्रति दुहराने से विषय हृदयस्थ शीघ्र हो जाता है। जिस विषय को याद करना है, उसको कितने ही दिनों में विभाजित कर देना ठीक होता है। जितने अधिक दिनों में विषय बांट दिया जावेगा, उतना ही मानसिक श्रम कम करना पड़ेगा। निम्न लिखित तालिका से यह कथन और भी स्पष्ट हो सकता है:—

अध्यय या शब्द खंड			प्रति दिन दुहराना					
			१	२	३	४	५	६
९ लाईन	१२	(शब्द खंड)	१५८	१०९	७५	५६	३७	३१
३ —	२५	— — —	१३४	७१	४०	२५	१७	१४
२ —	३६	— — —	११२	४८	२४	१७	११	९
६ कविता के पद			५२	२९	१७	१०	—	—

शक्ति को प्रभावित करता है, उतना शेष भाग नहीं कर सकता। इस लिए शब्दों के पहिले भाग को ध्यान से देखना चाहिये।

(९) इसी तरह स्मृति का दूसरा प्रयोग भी किया, और ज्ञात हुआ है, कि दो सेकिन्ड की अवधि में व्यक्ति विषय की तुलना कर सकता है। उसका मानसिक प्रयोचन कर सकता है। दो सेकिन्ड की अवधि का कारण यही हो सकता है। कि व्यक्ति की मानसिक शक्ति इतनी ही होती है, जिसकी सहायता से दो सेकिन्ड तक मन एकाग्र रह सकता है। अन्यत्र पाठकों को बतला चुके हैं, कि विचारों का ठीक २ सहयोग स्मृति का बहुत बड़ा सहायक होता है। तुलना से भी हमको स्मृति का एक प्रसिद्ध नियम प्राप्त होता है। एक विषय दूसरे अन्य सजातीय और विजातीय विषय से किस तरह बँधा हुआ है। इस नियम को सिलसिला या सन्सक्ति नियम (law of contiguity) कहते है। आदमी का विचार आते ही स्त्री का ध्यान आना बहुत ही स्वाभाविक होता है। इसी तरह अन्य सजातीय और विजातीय व्यक्तियों का ध्यान आना भी आवश्यक है। जितने अधिक बुद्धिमान व्यक्ति होते हैं। वह शीघ्रता से उपरोक्त नियमों का पालन कर सकते हैं। यह कार्य प्रायः उनकी अचेत अवस्था में ही हुआ करता है। डा० बैन एक स्थल पर कहता है, कि जो निर्विकल्पक प्रत्यक्ष ज्ञान (sensation) भाव, और विचार एक दूसरे के साथ २ पैदा होते हैं, या सम्बन्धित अवस्था में निकलते हैं, या इसी तरह बँध जाते हैं, उनका पुनर्जीवन साथ २ होना बहुत ज़रूरी हो जाता है। इस प्रकार का एक भाव आते ही दूसरा सजातीय और विजातीय भाव का पैदा होना अनिवार्य्य होता है। डा० हर्टले कहता है, कि सब सविकल्पक

और निर्विकल्पक प्रत्यक्ष ज्ञान एक दूसरे के पीछे या सिलसिले से ही उठते हैं, यह कथन निम्न लिखित विचार माला से स्पष्ट हो सकता है। एक रेल के डिब्बे की याद आते ही, दूसरे सब सजातीय गाड़ियों का विचार अवश्य ही हो जाता है।

१ विचार माला	२ विचार माला
रुपया	माल गाड़ी का डिब्बा
चाँदी	तीसरा दर्जे का डिब्बा
सोना	दूसरे दर्जे ,,
राजा	पहिला दर्जे ,,
प्रजा	राजा की गाड़ी
सौदागर	गवर्नर ,, ,,
विलायती सामान	वाईसराय ,,
सामान	मोटर ड्राईवर
जमींदार	बैल गाड़ी
खर्चा	बैल
किफायत शआरी	गाय अन्य चौपाये
सम्पत्ति शास्त्र	हिन्दू इत्यादि
विश्वविद्यालय	
विद्यालय	
अध्यापक	
विद्यार्थी इत्यादि २	

(२) नवीन घटनायें अथवा पदार्थों की भी पुनर्वृत्ति आसानी से हो सकती है, "अगर अन्य सब घटनायें और पदार्थ बराबर हों, तो एक नवीन विचार दूसरे बँधे हुए विचार

का पुनर्जीवन करा सकता है" हम सब गंगा, यमुना, सरयु इत्यादि बड़ी २ नदियों से परिचित हैं । जब हम किसी नवीन पहाड़ी देश का पर्य्यटन करते हैं, उस समय पहाड़ से निकले हुए सोतों को देखते हुए ही उपरोक्त नदियों का स्मरण आये हुए नहीं रह सकता। यह सोते पहिले पहिल ही देखे गये हैं। उस घटना .का भी स्मरण होना अतिआवश्यक हो जाता है, जो उक्त नदियों पर हमारे साथ हुई हो। अगर किसी मित्र से परिचय हुआ है, तो उस मित्र का ध्यान भी उस समय आना स्वाभाविक हो जाता है।

(३) "सब घटनायें और पदार्थ अगर बराबर होंगे, तो उस बिचार का अवश्य ही पुनर्जीवन हो सकता है। जिसका उक्त बिचार से घनिष्ट सम्बन्ध होगा, या बार २ बँधा होगा"। "यह नियम प्रायः अभ्यास के ऊपर निर्भर है । पाठक बिचार माला से देख चुके है, कि संसारिक नियमानुसार एक विचार के उपस्थित होने पर दूसरी बँधी हुई बस्तु पर अनायास ही ध्यान चला जाता है। लेकिन सबही बिचारों का ऐसा विधान नहीं होता। बहुत से विचारों अथवा वस्तुओं का पुनर्जीवन हमारे अभ्यास या आदतों पर भी अवलम्बित होता है । प्राप्त किये हुए अभ्यास पर भी विचार धारा का प्रभाव होता है। एक चाकू का स्मरण होते ही विद्यार्थी का पेन्सिल बनाने की या कागज काटने, या अन्य ऐसी घटना पर ध्यान चला जायगा। किसान का ध्यान खेत काटने के या घास काटने के औज़ार पर चला जायगा, या उसको ऐसी ही कोई घटना पुनर्जीवन हो जायगी।

हम पहिले पाठकों का ध्यान आकर्षित करा चुके हैं, कि

स्नायु शक्ति के प्रवाहानुसार हमारी विचार धारा चला करती है। स्नायु शक्ति की गति अभ्यास पर निर्भर होती है। पूर्वगतः विचारों का पुनर्जीवन या पुनर्वृत्ति भी स्नायु शक्ति की गति पर बहुधा निर्धारित होती है। एक प्रकार का नवीन विचार जैसे लाल पुष्प। माली को इस नवीन विचार से गुलाब के पुष्प का ध्यान आसकता है। जौहरी को लाल जवाहरात का ध्यान हो सकता है। लेखक को लाल स्याही के विचार का स्मरण हो सकता है। किसान को कुसुम के पत्ते का विचार पुनर्जीवित हो सकता है।

(४) "एक विचार या घटना या पदार्थ का भाव उदय होने से उस विचार की जाग्रति पुनः हो सकती है, जिसका सम्बन्ध सबसे पहिले बंधा हो"। प्राय हम देखते हैं, कि बाल्यावस्था की घटनायें बहुत पूर्ण रूप से स्मरण रहती हैं। यह भी देखा गया है, कि कोई कार्य्य पहिले किया जाता है, उसका असर पुष्ट और गहरा होता है। किसी कविता या गद्य का पहिला हिस्सा आसानी से याद हो जाता है। यह सदैव स्मरण रखना चाहिये, कि पहिला प्रभाव और विचार सम्बन्ध अधिक बलवान होता है। इसका मानसिक कारण मनोवैज्ञानिक अभी तक नहीं बतलाने में सफल हुए हैं कि स्नायुशक्ति का प्रवेश पहिले पहिल जिस स्नायु में हो जाता है, वह सदैव गहरा होता है।

(५) "जिस घटना या पदार्थ का सम्बन्ध बड़ी प्रबलता के साथ बंधा होता है। एक विचार के उपस्थित होने से दूसरा प्रबलता से साथ बंधा हुआ विचार आसानी से पुनर्जीवित हो जाता है"। पाठकों को पहिले किसी स्थल पर बतला चुके हैं,

कि प्रत्येक भावना में समान और विरोधी विचारों का उदय आसानी से हो सकता है। स्नायु शक्ति की गति इन्ही दो मार्गों पर चला करती है। जब कोई भावना अधिक प्रबलता के साथ उठती है। उस समय प्रतिस्पर्धी भावों को आने का अवसर ही नहीं मिलता। अतः स्नायु शक्ति का कार्य बिना किसी रुकावट के साथ अपने नियत स्थान पर केन्द्रस्थ हो सकता है। भावकूप भी बनाने में सफल हो सकता है। शोकातुरात्मक या हर्षयुक्त घटनाओं में प्रायः सम्बन्ध प्रबलता के साथ बंध जाता है।

किसी साथी का हॉकी खेलते समय पैर टूट गया। इस घटना को दुःखदाई कह सकते हैं। उपरोक्त नियमानुसार इस दुर्घटना का प्रभाव अन्य साथिओं पर इतना गहरा होगा, कि बहुत दिनों तक वह इसे नहीं भूल सकते। जब कभी भी उक्त घटना वाला साथी उस स्थान पर हॉकी खेलेगा, या एक दूसरे के साथ भेंट होगी। यह पैर टूटने वाली घटना अवश्य ही स्मरण हो जायगी। हम किसी रोचक वीर पर करुणामय अभिनय को देखते हैं। उस समय अभिनय की सारी घटनायें और पात्रों की क्रियायें तथा भाव इतना बलवान असर डालती हैं, कि दर्शकों के सामने यह सब घटनायें कितने ही दिनों तक स्पष्ट रूप में घूमा करती हैं। यह इतनी बलवान प्रतिमायें दर्शकों के मन पर बनाती है कि वह अनायास ही हृदयस्थ हो जाती है। यही दशा दिलचस्प उपन्यास की होती है। और श्रेष्ठ कविता की भी होती है। हमारा प्रत्येक ज्ञान स्रोत रुचि के साथ विषय को ग्रहण करता है। जितना व्यक्ति किसी भाव को रोच-

कता से ध्यान करेगा, उतना ही वह विषय बलवान असर के साथ आसानी से मन में धारण हो सकता है।

हमारी स्नायु शक्ति का व्योपार इतना गम्भीर है, कि वह किसी स्थाई नियमों पर कार्य नहीं कर सकती। जैसा कि किसी स्थल पर कह चुके हैं, कि इस शक्ति के मार्ग में बहुत सी रुकावटें हो जाती हैं। इसी लिए कितने ही तत्व वेत्ताओं ने और धार्म्मिक गुरुओं ने कितने स्थलों पर कहा है, कि जीवन सरल हो जिससे स्नायु शक्ति के संचालन मे कम से कम रुकावटें हों। ऐसी ही परिस्थिती मे वह नियमों का किसी रूप में पालन कर सकती है। जो कोई भाव आता है। उसका असर मन पर अवश्य ही होता है। इस असर का स्थाई भी कहा जासकता है। उसके उपयोग करने में हमारा मन इतना स्वतंत्र अवश्य है। कि वह किसी समय कोई भी नियम का सहारा ले सकता है। तद्वत उस विषय को धारण भी कर सकता है।

किसी स्थल पर पाठक रटने की विधि पर कुछ टिप्पणियां इन पृष्ठों में देख चुके होंगे। अब यह समझाने का प्रयत्न किया जावेगा, कि व्यक्ति इस नियम से अपने कार्य मे कितना सफल हो सकता है। और वह कितने समय तक विषय को मनसा में धारण कर सकता है। आज कल के विद्यार्थी वर्ग यही समझते हैं, कि रटने से विषय याद हो सकता है। समझने की आवश्यकता नहीं। ऊंची श्रेणी के विद्यार्थी यह समझते हैं, कि समझ लेना ही विषय को याद कर लेना है। कितने ही अंशों में यह दोनों ही विचार कच्चे हैं। केवल रटने से ही कोई

विषय कंठस्थ नहीं हो सकता । और न समझने से ही उसे याद कर सकते हैं। समझना बहुत ही आवश्यक है, और साथ ही साथ विषय को दुहराना भी चाहिये । मनोवैज्ञानिकों ने एक तीसरी विधि का अवलम्बन ठीक और रोचक माना है। यह विधि मानसिक दृष्टि से बहुत ही लाभदायक है, और ज्ञान-वृद्धि का भी एक मात्र साधन होता है। पाठकों को सदैव स्मरण रखना चाहिये, कि जिस प्रकार मनुष्य सामाजिक जीव है, अर्थात् वह गुण से, कर्म से, मन से, वचन से, सब मनुष्यों का केन्द्री भूत है, और सब मनुष्य उसके केन्द्री भूत हैं। इसी प्रकार अखिल सांसारिक भौतिक शक्तियां और पदार्थ एक दूसरे से अनेक प्रकार से बंधे हुये है। ज्ञान और बुद्धि का अखीरी लक्ष यही होता है, कि वह इन सम्बन्धो को ढूंढ निकाले। वैज्ञानिकों के और दार्शनिकों के भिन्न अनुसंधान इसी अनुपम लक्ष की प्राप्ति के लिए होते है। कितने विज्ञान वेत्ताओं ने इन सम्बन्धों को भिन्न २ रूप के नाम से भी पुकारा है। वेट ने भाप को नया नहीं निकाला। भाप शक्ति संसार में सदैव से उपस्थित है, लेकिन इस ने भाप का और पानी का सम्बन्ध या रूप ढूंढा। जिसके सहारे से भारी से भारी बोझा खींचा जा सकता है। इसी प्रकार रोमर ने विद्युत् शक्ति को पैदा नहीं किया। यह शक्ति भी भाप की तरह से संसार में अनादि काल से उपस्थित है, और रहेगी। उसने केवल विद्युत् शक्ति के भिन्न २ सम्बन्धों में से एक पोज़ीटिव सम्बन्ध का अवश्य चुनाव किया। विद्युत् शक्ति का यह एक रूप विशेष अवश्य ही है। सम्भवतः इसी तरह के कितने ही और रूप हों क्रमशः उनका भी विकास होना निश्चित ही है। आज आधे

से कुछ अधिक कार्य भाप और बिजली द्वारा ही होते हैं। यही नहीं, इन दोनो शक्तिओं ने हमारा जीवन पहिले की अपेक्षा बहुत ही सरल बना दिया है। दिन प्रति दिन कठिनाइयां दूर होती चली जाती है।

अस्तु यह छटवां विधि है, कि प्रत्येक पदार्थ के भिन्न २ रूप है, और इसी तरह प्राकृतिक शक्तिओं के भी रूप या सम्बन्ध होते है। इन रूपों को पहिचानना और सम्बन्धो को ढूढना ही स्मृति को बढ़ाना होता है। यह नहीं, इसी नियम पर हमारी प्राचीन और आज कल की शिक्षा प्रणाली कार्य कर रही है। जब तक हम इन रूपों को या सम्बन्धों को नहीं पहिचानते, उस समय तक ज्ञान वृद्धि नहीं हो सकती। विषय की सत्यता का निरूपण भी इन्ही सम्बन्धों की सहायता से हो सकता है। कोई भी ऐसा सत्य विषय नहीं हो सकता, जिसका सम्बन्ध किसी अन्य पदार्थ या विषय के साथ न हो। गर्मी एक प्राकृतिक शक्ति है। पानी उष्णता का विरोधी होता है। जहां पानी होता है। वहां गर्मी नहीं रह सकती। उष्णता का एक रूप भाप होता है। लेकिन जब भाप को किसी कांच के गिलास मे बन्द कर दिया जाता है। उसका भी पानी हो जाता है। पाठकों ने नदी के तट पर देखा भी होगा, कि सूर्योदय के पहिले नदी में कुहरा सा छाया रहता है। इस विधि को विज्ञान भाषा में (Ebullition and evaporation) उबलना और भाप बनना कहते है। पानी और उष्णता आपस में प्रतिरोधी होते हुए भी एक रूप है। जैसा कि पाठक देख चुके है, कि भाप से ही पानी बन सकता है। इस प्रकार के अनेक उदाहरण होते है। वृक्ष का एक रूप उसकी पत्तीयां और फल भी

है। हमारी मानसिक भावनाओं का एक रूप शासन विधान और क्रान्ति भी होता है। भावना एक ही है। लेकिन उसके रूप भिन्न २ दीखते हैं।

वर्षा ऋतु में प्रायः इन्द्र धनुष को सभी देखते है। हर वस्तु का भिन्न २ रंग भी देखने में आता है। पुष्प भी लाल, पीले, हरे इत्यादि रंग के दृष्टि गोचर होते है। यह रंग भी पुष्पों का एक रूप होता है। जिस रीति से उस रूप की उत्पत्ति होती है उसी विधि से उसका नाश भी होता है। बहुत से अनुसंधानों से देखा गया है, कि यह रंग सूर्य्य की किरणों से प्राप्त होता है। यही सूर्य्य किसी समय रंगों का विनाश भी करता है। इन सब रूपों का ज्ञान प्राप्त करने से, विषय या भाव आसानी से धारण हो सकता है। पुनरावृत्ति भी इच्छानुसार हो जाती है। इस नियम से विषय पर ध्यान देने से ज्ञान वृद्धि भी अपने आप होती जाती है। मानसिक श्रम यद्यपि होता है, तो वह रोचक भी हो सकता है। जिज्ञासा भी तृप्त हो सकती है। व्यवसात्मक भावना की वृत्ति ही यह है, कि यह सदैव भिन्न २ सम्बन्धों को और रूपोंको जानना चाहती है। इस नियम के साथ २ हम समझ के साथ विषय का मनन करना या रटना भी प्रारम्भिक अवस्था में ठीक समझते हैं। धीरे २ अपने भावों को प्रकाश करना भी अच्छा है। इससे भाषा यत्न ठीक हो जाता है। इस रीति से व्यक्ति कठिन से कठिन विषय तोता रटाई के वगैर हृदयस्थ कर सकता है। रटाई में एक दोष यह है, कि व्यक्ति एक शब्द को भूल जाता है, उस समय गद्य या पद्य का सारा भाग स्मृति से

विलीन हो जाता है। जो विषय समझ के साथ या सम्बन्धों के साथ याद किया जाता है। अकस्मात् कोई शब्द स्मृति से चला भी जावे, तो उसका कोई सम्बन्ध याद आते ही, वह शब्द अवश्य ही स्मृति में आसकता है।

मेरा अनुभव यह है, कि अन्तर्दृष्टि या आन्तरिक चिन्तन से किसी विषय की प्रतिमा हमारे सामने घूम निकलती हैं। इन प्रतिमाओं का बार २ घूमना ही स्मृति को बलवान कर देता है। किसी विषय को साकार पदार्थों के साथ सम्बन्धित कर लेने से, उसका पुनरुद्भावन बहुत ही शीघ्रता से हो जाता है। हमारा दृष्टि येन्द्र ही एक मात्र साधन है। जिसकी सहायता से साकार पदार्थ को गृहण कर सकते हैं। बहुत से मानसिक खोजों से प्रमाणित होता है, कि साकार पदार्थ की प्रतिमाओं का नाश बहुत कम होता है। यह प्रतिमायें ८०, वर्ष की आयु के पश्चात कुछ धुंधली अवश्य पड जाती हैं।

उपरोक्त मानसिक कारण मनोविज्ञान वेत्ताओं ने निर्णय किया है। छोटे २ बच्चे न तो किसी विषय को रटते है। और न मनन ही करते हैं। वह जो कुछ भी करते हैं, उसका साक्षात्कार करने को कटिबद्ध हो जाते हैं। मोन्टेसरी ने बाल मनोविज्ञान की बहुत सी परीक्षायें की हैं। इटली के एक विद्यालय में उन्होंने परीक्षात्मक रूप से देखा, कि एक शिशु ने केवल अपनी जिज्ञासा या कौतूहल को तृप्त करने के लिये लगभग ९ बहु मूल्य कांच के झाड़ फानूस तोड़े। और उनके टुकड़ों को कितने ही दिनों तक सुरक्षित रखा, इसी तरह के इस बाल मनोविज्ञान विदुषी ने और भी प्रयोग किये। इन प्रयोगों में उसने बहुत व्यय भी किया है। एक बच्चे ने लगभग २० बहु मूल्य दर्पणों को फोड़ कर अपनी जिज्ञासा तृप्त की। मैंने भी देखा कि मेरे बच्चे ने जिसकी अवस्था ४॥ वर्ष की थी। तीन दर्जनों से अधिक पेन्सिल और निब तोड़ डाले। यह सब बालक उपरोक्त क्रिया के पश्चात् वैसे पदार्थों को बड़ी सावधानी से रखने लगे। मोन्टेसरी ने एक स्थल पर लिखा है, कि बच्चे वस्तुओं को तोड़ फोड़ने के पश्चात उनका उपयोग बहुत सावधानी के साथ करते है। यह सावधानी युवा पुरुषों से भी अधिक होती है।

इस सावधानी का और तोड़ फोड़ की क्रिया का स्मृति से घनिष्ट सम्बन्ध होता है। यह भी देखा गया है, कि बालक सुनने की अपेक्षा देखना या हाथ से छूना अधिक पसंद करते हैं। मानसिक कारण यही है, कि हमारे पूर्वजों का जीवन बहुधा अमली या प्रयोगात्मक रहा है, और यही वृत्ति बच्चों में भी होती है। इसी वृत्ति, के आधार पर वह प्रत्येक भाव या पदार्थ

का स्पष्टीकरण करना चाहते हैं, ताकि उनकी स्मृति स्थाई रह सके। स्पर्श करना भी बच्चों के लिए स्वाभाविक होता है। अग्नि को छूना या अन्य हानि कारक पदार्थ अथवा जीव का स्पर्श करना प्रायः बच्चों के लिए साधारण होता है। यहां तक देखा गया है, कि वह सांप को छूने के लिए भी झपटते हैं। मनोवैज्ञानिक कारण यही है, कि नेत्रों की अपेक्षा हाथों से और भी अधिक विषय अथवा घटना का स्पष्टीकरण होता है। प्रयोगात्मक मनोवैज्ञानिकों का मत है, कि हाथों से कार्य करने से स्नायु शक्ति चैतन्य मस्तिष्क केन्द्रों में तुरन्त ही प्रवेश कर सकती है। यही नहीं विषय का समवधारण भी होता है। इच्छा शक्ति भी जाग्रत होती है। जब स्नायु शक्ति चैतन्य मस्तिष्क केन्द्रों में पहुंच जाती है। विचार सम्बन्ध भी अनायास स्थापित होजाते हैं। अतः स्मृति भी बिना रटे हुए स्थाई हो जाती है।

हम पाठकों से प्रार्थना करते हैं। कि वह यथा शक्ति रटने की प्रथा को छोड़ने की कोशिश करें, मनन अथवा विविध रूप के ज्ञान द्वारा उस भाव अथवा पदार्थ का चिन्तन करना ही स्मृति को बलवान बनाना होता है। जो व्यक्ति चाहते हैं, कि स्मृति का कार्य रोचक और कल्याणकारी हो, उनके लिए जरूरी है, कि वह पिछली रीति का अनुशीलन करना प्रारम्भ करदें। ज्ञान वृद्धि का सब से अच्छा मार्ग यही है, कि प्रत्येक भाव और पदार्थ के भिन्न रूपों को देखना या उसका अनुमान करना चाहिये।

कंठस्थ करने की रीति– जैसा कि पहिले कह चुके हैं, कि

किसी विषय को कंठस्थ करने के लिए विचार सम्बन्ध के नियमों का पालन करना अतिआवश्यक होता है। यह ठीक प्रकार से नहीं कहा जा सकता, कि मन किस नियम की सहायता से कब विषय को हृदयस्थ कर सकता है। कितने ही मनोविज्ञान वेत्ताओं ने परीक्षा करने पर निर्णय किया है, कि विषय को दो प्रसिद्ध विधि से याद कर सकते है। पहिली विधि तो यह है, कि गद्य या पद्य के टुकड़े कर लिये जाते है। और दूसरी क्रिया यह है, कि सारा गद्य या पद्य को पूर्ण याद कर लिया जाता है। इन दोनों रीतिओं मे कौनसी रीति उपयोगी है, विश्वास के साथ कहना कठिन है। मनोविज्ञान में यह विषय अभी विवाद ग्रस्थ है। लेकिन मनोविज्ञान की अपूर्ण अवस्था में यह कहना अनुचित न होगा, कि मन की सारी क्रियायें ध्यान और रूचि पर स्थित होती है। यह तो प्रायः सभी दार्शिनिक या मनोविज्ञानिक मानते हैं, कि मन प्राधान्यतः ही चंचल है। इसको वही विषय स्वीकार हो सकता है, जो विभाजित अवस्था मे हो। अर्थात् छोटा विषय रुचिकर या ध्यान योग्य हो सकता है। हम देखते हैं, कि शनैः२ संसार के प्रायः सारे कार्य ही समाप्त हो जाते है। फ्रान्स के सुप्रसिद्ध क्रान्तकारी वोल्टेयर और रूसो लिखते है, कि विपक्षी को उसी समय अधिकार में कर सकते है, जबकि उसकी महान् शक्ति को दो या चार और अधिक भागों में विभक्त कर दिया जाता है। यही सर्व व्यापी नियम प्रत्येक कठिन कार्य मे सहायता कर सकता है। विद्यार्थी को कठिनाई विषय को याद करने मे उतनी ही होती है। जितनी कि राजनैतिज्ञ को जनता की मनोवृत्तियों को अधिकार मे करने के लिये होती है। वाल्या-

वस्था में सबसे बड़ी कठिनाई यह होती है, कि ज्ञान भंडार अपरिपक्व दशा में होता है। और मानसिक कार्यालय निर्बल और चंचल होता है। इसलिए विषय को गृहण करना कठिन हो जाता है। इस कठिनता को उपरोक्त नियम से बांट कर सफलता प्राप्त हो सकती है।

अर्थ शास्त्र का भी ऐसा ही एक प्रसिद्ध नियम है, कि प्रत्येक कार्य का श्रम विभाग (Division of labour) कर देने से, वह कार्य सुगमता से और सुन्दरता से पूर्ण हो जाता है यह नियम भी मानसिक वृत्तिओं पर निर्भर किया गया है। उन कार्य को ध्यान में रखते हुये हम कह सकते हैं, कि गद्य और पद्य के टुकड़े करके याद करने में कुछ सुगमता हो सकती है। विषय को थोड़ा २ स्मरण करना मानसिक तथा शारीरिक रचना के अनुकूल है। विषय को एक दम याद करना स्वास्थ्य के लिये भी लाभदायक नहीं हो सकता। गद्य और पद्य को याद करने के लिये विभाग क्रिया का एक तीसरा नियम भी है, इसको स्वाभाविक श्रम विभाग कह सकते हैं। टुकडे करने की अपेक्षा किसी पूर्ण गद्य या पद्य को कितने ही दिनों में याद करना मानसिक नियम के अति अनुकूल होता है। इस नियम द्वारा विषय को समय में स्वाभाविक रीति से बांट दिया जाता है। समय द्वारा ही संसार के सारे कार्य होते हैं। इसी लिये समय सब से श्रेष्ठ धन है। इस धन की अनुपस्थिती में किसी विषय का कोई आस्तित्व नहीं हो सकता। किसी कार्य को कितने ही दिनों में करने से थकावट नहीं होती, और रोचकता भी बढ़ती जाती है। विचार सम्बन्ध पुष्ट बन जाते हैं। मन में धीरे २ विषय को जमने का समय भी मिल जाता है।

यही नहीं स्नायु शक्ति, जिस पर मानव जाति का सारा कार्य निर्भर होता है, वह भी अपना मार्ग निर्णय कर सकती है। हर एक कार्य में स्नायु शक्ति के कार्य का ध्यान रखना बहुत ज़रूरी होता है। बहुत दिनों में विषय को फैला कर याद करने के प्रयोग भी किये गये हैं। और पाठक स्वयम् भी कर सकते है। लाभ और हानि भी अनुभव हो सकती है। किसी कविता को दस बार दुहरा कर एक दिन में याद कर सकते है। अगर इस दी हुई कविता को दो २ बार करके पांच रोज में याद किया जावे तो परिणाम क्या होगा। परिणाम मे उपरोक्त लाभों की अपेक्षा एक सब से अधिक लाभ यह है कि व्यक्ति को विषय की भिन्न अवस्था और सम्बन्धों को जानने का सुअवसर भी मिल जाता है।

कुछ मनो वैज्ञानिक कविता को निम्न लिखित विधि से हृदयस्थ करना सुगम मानते हैं। सम्पूर्ण कविता को कितने ही टुकड़ों में विभाजित कर लेना चाहिये। पहिले टुकड़े को मनन करना चाहिये। इसके पश्चात् दूसरे टुकड़े को लेना चाहिये। इस दूसरे टुकड़े को कुछ दुहराने के बाद, पहिले और दूसरे टुकड़े को साथ २ दुहराना चाहिये। इसी तरह तीसरे और चौथे टुकड़ों को याद करना चाहिये। फिर सब को मिला कर याद करना चाहिये। तद् अनन्तर देखना चाहिये, कि इस नियम से सारी कविता की विक्षेप रहित प्रतिमा बन सकती है, अथवा नहीं। जब इस तरह की प्रतिमायें बन जायें तब विषय को दूसरे दिन को छोड़ देना चाहिये। प्रातः काल उठ कर फिर उसी क्रिया द्वारा कुछ समय तक प्रतिमा सफलता से बनाने की कोशिश करनी पड़ती है।

विस्मृति के अध्याय में पूर्णतया स्पष्ट कर दिया गया है, कि थकावट से हमारे मानसिक कार्यालय में बहुत शिथिलता आजाती है। थकावट शारीरिक कार्य की अपेक्षा मानसिक कार्य में अधिक आती है। इस थकावट से कोई विशेष अवयव ही शक्ति हीन नहीं होता, सम्पूर्ण शरीर ही व्यथित हो जाता है। विषय परिवर्तन या आराम लेने से थकावट अवश्य ही दूर हो जाती है। इस लिये हृदयस्थ या मनन करने का कार्य सदैव ऐसे समय में करना चाहिये, जब कि सारा शरीर पूर्ण स्वस्थ्य हो। बहुत से मानसिक तथा वैज्ञानिक अन्वेषणों से यही पता चलता है, कि प्रातःकाल का समय मनन करने के लिये सब से अच्छा होता है। स्वच्छ वायु से मानसिक कार्यों को बहुत सहायता मिलती है। पाठक स्वयम् भी परीक्षा कर सकते हैं, कि जब वह थक जावें तो स्वच्छ वायु के सामने मुंह करके बैठ जाने से कुछ २ थकान अवश्य ही दूर हो जाती है। जब किसी कार्य में अरूचि हो जावे, तो उस अरुचि को दूर करने के लिये टहलना भी उपयोगी होता है। हमारी स्मरण शक्ति सारी स्नायु और शारीरिक शक्तियों का योग है। अतः स्मृति का कार्य भी उसी समय ठीक हो सकता है, जब कि सारा शरीर स्वस्थ्य हो। मनोविज्ञान और शरीर विज्ञान की दृष्टि से देखा जा सकता है, कि मानसिक और शारीरिक परिस्थिति प्रातः काल चार बजे अत्यंत ठीक होती है। स्मरण शक्ति भी इसी समय ऊंची से ऊंची अवस्था में होती है जैसे २ थकावट बढ़ती जाती है। स्मरण शक्ति भी कम होती जाती है। प्रातः काल के आठ बजे से दुपहर के बारह बजे तक स्मरण शक्ति कम होती है। और दुपहर के बारह बजे से सायंकाल के चार

बजे बहुत ही कम हो जाती है। इसी तरह थकान के साथ २ स्मृति का अधिक ह्रास होता जाता है। रात्रि के समय में इसकी दशा न्यून से न्यून होती है। रात्रि के बारह बजे यह शक्ति बहुत ही कम हो जाती है। जैसे २ थकावट दूर होती जाती है। और शरीर स्वस्थ्य हो जाता है। उसी अनुपात से हमारी स्मरण शक्ति भी बढ़ती जाती है। जब व्यक्ति साधारणतया थक जाता है। उसकी थकान ४ घन्टे के आराम के पश्चात् कम होना प्रारम्भ हो जाता है। अगर ९ या १० बजे सोने का समय माना जाय। तब १ या २ बजे से थकान दूर होना प्रारंभ हो जाता है। लेकिन जब औक्सीजन गैस की अधिकता हो-जाती है। उस समय थकान बहुत ही शीघ्रता से दूर हो जाती है। विज्ञान का मत है कि वृक्ष दिन में कारबोनिक गैस लेते हैं और औक्सीजन गैस छोड़ते हैं। रात्रि में वृक्षों का कार्य विपरीत हो जाता है। लेकिन प्रातःकाल के चार बजे से यह वृक्ष साधारणतया दिन की तरह कार्य कर निकलते हैं। हम सहसा कह सकते है। कि ध्यान करने का कार्य अथवा स्मरण करने का कार्य प्रातःकाल चार बजे से अधिक से अधिक ८ या ९ बजे तक ही ठीक हो सकता है।

स्मृति के कुछ प्रसिद्ध नियम

जितनी भी मानसिक शक्तियां मनुष्य समाज में पाई जाती हैं, जैसे दूरदर्शिता, विचार धारा, प्रेम, दया, न्याय परायणता, सत्य, हितैषिता, अनुराग, पवित्रता, इत्यादि! इन सब में विचार और स्मरण शक्तियां सर्व श्रेष्ट मानी गई हैं। मनुष्य और पशु में केवल इतना ही अन्तर है, कि मनुष्य विचार द्वारा सब कुछ कर सकता है। पशु में विचार शक्ति का अभाव होता है। यह विचारा जीवन पर्यन्त वृत्ति और प्रवृत्ति के अधिकार में रहता है। जो पशु मनुष्य समाज के निकट रहते हैं। उनमें यही वृत्ति और प्रवृत्ति कुछ सूक्ष्म रूप धारण कर लिया करती है। मनुष्य के और जानवर के मस्तिष्क की परीक्षा करने पर ज्ञात हुआ है, कि मनुष्य के मस्तिष्क में और जानवरों के भेजे में बहुत बड़ा अन्तर होता है। मनुष्य के मस्तिष्क में सेल्स, पुछल्ले, दरार, सफेद और भूरा मसाला अधिक होता है। पशुओं में इनका अभाव सा ही होता है। बन्दरों में और जानवरों की अपेक्षा उपरोक्त मानसिक साधन अधिक होते हैं। बन्दरों के मस्तिष्क में कुछ २ दरारें, सेल्स, भूरा और सफेद मसाला भी मिलता है। हाथी की भी यही दशा है, लेकिन उसका भेजा मनुष्य से बहुत बड़ा होता है। बन्दर ही को मनुष्य जाति से दूसरा समझदार जानवर मान सकते हैं। मनुष्य अपने मस्तिष्क यन्त्रालय की सहायता से कुशल ज्ञान वाला हो सकता है। वह मस्तिष्क के सहारे कठिन से कठिन

समस्याओं को समझ कर हल कर सकता है। लेकिन अन्य जानवर ऐसा नहीं कर सकते।

सबसे बड़ी शक्ति मनुष्य में यह है, कि वह अपने अनुभव को संचित रख सकता है। और दूसरों की नकल कर सकता है। अर्थात् उसमें जिस शक्ति का अभाव है। दूसरों का अनुकरण करके प्राप्त कर सकता है। और इन आर्जित शक्तियों को भी संचय कर सकता है। यह संचय करने का गुण मनुष्य, जाति मे बहुत लाभ दायक प्रमाणित हुआ है। अनुभव से लाभ उठाने की शक्ति द्वारा ही मनुष्य जाति अन्य सब प्राणियों पर विजई हो सकती है। उनको अपने अधिकार में रख सकता है। जिन व्यक्तिओं में इस शक्ति का अभाव होता है, या कम होती हैं। वही व्यक्ति जीवन संग्राम के प्रश्नों को सफलता के साथ हल नहीं कर सकते। Survival of the fittest (योग्य का जीवन) वाली गाथा को पूर्ण रूप से हल नहीं कर सकते। अनुभव को संचित रखने की शक्ति और उससे लाभ उठाने की अभिलाषा ही मनुष्य समाज के लिए कल्याणकारी प्रमाणित हो सकती है।

भिन्न २ ज्ञानेन्द्रियों में स्नायु शक्ति द्वारा विषय ग्रहण करने की नैसर्गिक शक्ति होती है। वह अमुक विषय को ग्रहण कर सकती है, लेकिन उनमे उस विषय को स्थिर रखने की योग्यता नहीं होती। इसी तरह वह किसी विषय अथवा सन्देष की तुलना भी नहीं कर सकती। यह अवश्य कहा जा सकता है, कि घ्रांण का कार्य गन्ध लेने का है। और नेत्रों का कार्य देखने का है। इसी प्रकार और भी ज्ञानेन्द्रिओं का कार्य होता

है। प्रत्येक ज्ञानेन्द्रिय अपना निश्चित कार्य ही कर सकती है। अनुभव को संचित रखने का भार और विषय् को सीखने अथवा तुलना करने या नकल करने की योग्यता मस्तिष्क के भिन्न २ भाव कूर्पों (Neurons) (पुंछल्लों) को या वात-कोषों (Brain cells) को ही होती है। जैसा कि किसी स्थल पर कह चुके हैं, कि हर एक विषय का कुछ न कुछ प्रभाव मस्तिष्क पर अवश्य ही पड़ता रहता है। बालक के मस्तिष्क को कितने मनोवैज्ञानिक कोरा पत्र (Tabula rasa) कहते हैं। यह कोरा पत्र अवस्थानुसार अनुभव या शिक्षा रूपी प्रभावों से शनैः अङ्कित होना रहता है। शरीर वैज्ञानिकों के उपरोक्त कथन के अनुसार यह भी निर्णय करना आसान है, कि इन सेल्स और पुंछल्लों में मिलने की शक्ति भी होती है। जब यह दोनों आपस में एक दूसरे से मिल जाते हैं। उसी समय पुराने अनुभव से लाभ उठ सकता है। विषय की प्रतिमायें पुनः हमारे उक्त मानसिक क्रिया द्वारा आ जाया करती हैं। इन क्रिया का दूसरा नाम स्मृति भी होता है। सैल्स और पुंछल्ले प्रथक २ नहीं होते, सेल्स के बढ़े हुए भाग को ही पुंछल्ले कहते हैं। लेकिन एक सैल दूसरी सैल के बहुत ही निकट होते हैं। किसी विषय का प्रभाव ही इनको आपस में मिला दिया करता है। इस मिलने की शक्ति का नाम ही धारणा शक्ति (Power of retention) है। किसी विषय की प्रतिमा या प्रभाव से धारणा शक्ति बढ़ती है। और धारणा शक्ति द्वारा ही विषय का स्मरण हो जाता है। जब अमुक प्रभाव अथवा विषय समाप्त हो जाता है। उस समय मिले हुए सैल्स भी प्रथक २ हो जाते हैं।

स्मृति के कुछ प्रसिद्ध नियम

उपरोक्त कथन से पाठक इतना तो अवश्य ही समझ चुके होंगे, कि स्मरण शक्ति कौनसी शक्ति है। अनुभव संचय करने में इस शक्ति ने हमारी कहां तक सहायता की है। ऐतिहासिक विकास का उल्लेख करते हुए हम अपने विषय को समझाने का प्रयत्न करेंगे। आदि पुरुष को गिने चुने ही विषय को स्मरण करने का कष्ट करना पड़ता था। इस लिए ही बहुत से जीवन कार्य वंश परम्परागत से ज़बानी ही चला करते थे। हमारे यहां वेद शिक्षा भी आदि काल में ज़बानी ही होती रहती थी। आज कल भी बहुत सी जंगली जातिओं में बहुतसा कार्य मुंह ज़बानी ही हुआ करता है। गांवों के बहुत से अशिक्षित व्यक्ति आज कल भी अपना हिसाब किताब ज़बानी ही रखते है। कितने ही देशों मे ग्रन्थि प्रथा अब भी प्रचलित हैं। लोग जिस विषय को स्मरण रखना चाहते हैं। उसकी एक ग्रन्थि लगा लिया करते हैं। जब वह गांठ उनके हाथ में आती है। उस विषय का स्मरण अनायास ही हो जाता है। जैसा २ मनुष्य जाति का जीवन जटिल होता गया। स्मरण रखने के विषय भी बढते गये। लेखन प्रथा का भी प्रादुर्भाव हुआ। सभ्यता की ऊंची दशा में मानसिक शक्तिओं को स्वतः ही विकसित होना पड़ता है। अब हम सहसा कह सकते हैं, कि पहिले की अपेक्षा हम सब को मानसिक श्रम बहुत अधिक करना पड़ता है। प्रबल स्मरण शक्ति की अनुपस्थिति मे जीवन नौका का चलना सम्भवतः कठिन ही दीख पड़ता है। इसलिए हम सब को वैज्ञानिक नियमों का सहारा लेना अनिवार्य्य हो गया है।

पाठक क्रमशः देख चुके होंगे, कि स्मरण शक्ति के लिए हमको सबसे प्रथम अनुराग, (Interest) और अवधान

(attention) की अति आवश्यकता होती है। इन दो मानसिक क्रियाओं की अनुपस्थिती मे स्मरण शक्ति का कोई भी काय सम्भव नहीं हो सकता। जिस परिश्रम में उपरोक्त मानसिक क्रियाओं का अभाव हो उस श्रम का कोई प्रति फल ही नहीं हो सकता। हमारे विद्यार्थी वर्ग को इस तरह का परिश्रम केवल थकाने वाला ही प्रमाणित होगा। अनुराग (Interest) और अवधान (Attention) का घनिष्ट सम्बन्ध होता है। पहिली मानसिक क्रिया के पीछे ही दूसरी मानसिक क्रिया का होना सम्भव हो सकता है। यह भी कहा जा चुका है। कि आवेग स्थाई उसी समय हो सकता है, जब कि यह निर्विकल्पक और सविकल्पक प्रत्यक्ष ज्ञान मे बदल जावे। साथ ही साथ सामान्य प्रत्यय (Concept) की भी मानसिक क्रिया पूरी हो। पूर्ण प्रतिमायें समवधारणा (Conception) के पश्चात् ही सम्भव हो सकती है।

(६) स्मरण शक्ति का सुविख्यात नियम अखंड प्रतिमाओं का बनाना ही है। प्रतिमायें भाषा द्वारा और अन्य बाह्य साधनों द्वारा ठीक नहीं बन सकती। इनको ध्यान द्वारा ही बनाने की आदत होना चाहिये। किसी विषय को साधारण नेत्रों की अपेक्षा मस्तिष्क नेत्रों (Brain-eyes) से देखना स्मरण शक्ति के लिए बहुत ही अच्छा होता है।

(७) जिस विषय को याद करना है। उसके विपरीत और सामान्य ज्ञात विषयों को सोचना। अगर किसी व्यक्ति को ऐतिहासिक घटना मोरले-मिन्टो (Morley Minto) सुधारों को याद करना है। उस समय दूसरे सुधारों का भी ध्यान करना चाहिये। और उनके विपरीत भी सोचना आवश्यक है। यह

भी ध्यान करना चाहिये, कि इन सुविधाओं को नष्ट करने वाली कोनसो घटनायें थीं। इस तरह के मानसिक चिन्तन का फल यह होगा, कि स्नायु शक्ति (Nervous energy) उक्त कालान्तर में निश्चित सजातीय चेतन्य केन्द्रों को पार कर सकती है। यह स्नायु शक्ति जब चेतन्य केन्द्रों को पार कर जाती है। कोष्ट और भाव कूप गति युक्त हो कर आपस में मिल जाते हैं। स्पष्ट शब्दों में यह कह सकते है, कि भाव सम्बन्ध स्थापन इस मानसिक क्रिया द्वारा पूर्ण हो जाता है। जितना अधिक किसी विषय पर एकाग्रता के साथ सोचा जायगा या ध्यान किया जायगा, उतने ही अधिक भाव सम्बन्ध भाव कूप और कोष्टों की सहायता द्वारा स्थापित हो सकते हैं।

(३) सजातीय और विजातीय विषयों पर ध्यान देने से स्नायु शक्ति प्रबलता के साथ भाव कूपों तक पहुँच जाती है। इस क्रिया में जितना अधिक समय व्यतीत होगा उतना ही अधिक विषय स्मृति ग्राही हो सकता है। क्योंकि स्नायु शक्ति अधिक समय के चिन्तन से ही भाव कूपों तक जा सकती है।

(४) जातीय सम्बन्ध स्थापित करने से किसी भाव की पुनरावृत्ति हो सकती है। विषय आसानी से स्मरण हो जाता है। स्त्री और पुरुष का जातीय सम्बन्ध होता है। चमकीले और उजाले का भी जातीय योग है। पुरुष का विचार आते ही, स्त्री का भाव उदय होना आवश्यक है। चमकीले पदार्थ का ध्यान आते ही, उजाले का भाव उत्पन्न हो सकता है। कतिपय मनोवैज्ञानिकों की धारणा है, कि भावकूपों की रचना सजातीय और विजातीय नियम के अनुसार होती है, इन दोनों भावकूपों का योग भी कम रुकावट के साथ हो

जाता है। बहुत से यन्त्रों द्वारा देखा भी गया है कि यह दो श्रेणी के भावरूप बहुत ही समीप होते हैं। इस लिये इन दोनों भावरूपों में चेतना भी शीघ्रता से होना स्वाभाविक है।

(५) बाह्य सम्बन्ध भी मानसिक क्रिया है। स्मृति को इससे बड़ी सहायता मिलती है। इस नियम का आलिङ्गन अनुभवी पुरुष ही कर सकते हैं या वह व्यक्ति कर सकते हैं जिनका ज्ञान उच्च अवस्था में होता है। बाह्य ज्ञान प्रायः विविध विषयों की पुस्तकों से या भ्रमण से उपलब्ध हो सकता है। छोटे २ बच्चे इस नियम से अधिक लाभ नहीं उठा सकते। ऊंची श्रेणी के विद्यार्थी इस नियम से अपना ज्ञान कोष बढ़ा सकते हैं। उनके लिये यह विधि बहुत ही उपयोगी होती है। गाय ग्वालिया का बाह्य सम्बन्ध है। जितनी भी ललित कलायें हैं। उन को भी बाह्य-सम्बन्ध की श्रेणी में रख सकते हैं। ऐतिहासिक घटना भी बाह्य सम्बन्धी होती है। प्रायः जितने भी कवि, वैज्ञानिक, उपन्यासकार और अन्य लेखक मानसिक नियमों का किसी न किसी रूप में अवश्य ही पालन करते हैं। किसी रचना को याद करने के लिये लेखक की विचार शैली पर ध्यान देना चाहिये। जब हम किसी विषय को तर्क की कसौटी से आलोचना करते हैं। तब ज्ञात हो जाता है, कि प्रत्येक रचना में मूल तथ्य इने गिने रूप में रहते हैं। और यह आपस में एक दूसरे से गुथे रहते हैं। इनका घट पटादि का सम्बन्ध रहता है। इसलिये जिस विषय को याद करना हो, उस में से इन तथ्यों को ढूंढ़ निकालना चाहिये। नियमानुसार प्रत्येक पेरा में एक तथ्य अवश्य ही होना चाहिये। लेकिन आज कल के लेखक इस नियम का कम पालन करते हैं। दो तीन पेराओं में एक

तथ्य मिलना कठिन हो जाता है। आज कल के लेखक लेखन कला के आडम्बर में अपने महान उद्देश को ही हड़प कर जाते हैं। ऐसी दशा में स्मरण शक्ति की कठिनता कितनी ही गुनी बढ़ जाती है।

स्मरण करने वाले को प्रथम इन्हीं तथ्यों को चुन लेना चाहिये। पश्चात जाति वाचक, गुण वाचक इत्यादि की श्रेणी में रख कर, स्मरण कार्य शुरू करना चाहिये। इस मानसिक नियम के आधार पर कितने ही पैरा आपस में गठित होजाते हैं। जब तथ्य जाति अथवा गुण वाचक श्रेणी में रख लिये जाते हैं व्यक्तिगत योग्यतानुसार बढ़ भी सकते हैं लेकिन योग्यता अवश्य ही होनी चाहिये। छोटी श्रेणी के विद्यार्थियों को यह विधि कठिन प्रतीत होगी। अतः उनको अपनी शक्ति के अनुसार ही परिश्रम करना चाहिये। इस नियम की सहायता से उनकी उत्पादक मति में जाग्रिति हो सकती है।

इस नियम को ही (Catenation) छोटी शब्द श्रेणी भी कहते हैं। उदाहरणतया पुस्तक-पाठक, सडक-यात्री। इस छोटी शब्द श्रेणी को तीन मुख्य भागों में विभाजित कर लिया जाता है। पहिला शब्द और अखीर का शब्द, जैसा कि उपरोक्त शब्द श्रेणी से ज्ञात हो सकता है। एक मध्य का शब्द होता है। यह शब्द दो इधर उधर के शब्दों को जोड़ता है। यह मध्य शब्द इतना सुविख्यात और प्रिय हो, ताकि दो शेष शब्दों को उठा सके। जब यह मध्य का वाक्य स्मरण होगा, उस समय इधर उधर के शब्दों को स्मृति में आना स्वाभाविक ही हो जायगा। पहिली शब्द श्रेणी में सुविख्यात मध्य का वाक्य "अध्यापक" हो सकता है। अध्यापक का स्मरण आते ही

पुस्तक और पाठक इत्यादि शब्द आसानी से स्मृति में आसकते हैं। क्रमानुसार तांगा या मोटर दूसरी शब्द श्रेणी का मध्य वाक्य हो सकता है, जब तांगा और मोटर का स्थान आता है। सड़क और यात्री का भाव उदय होना बहुत ही आवश्यक हो जाता है। "शिवाजी की तीसरी सूरत पर चढ़ाई की ऐतिहासिक घटना और विशेषतः फेक्टरी के कार्य कर्ताओं को क़ैदी बनाना"। देखा जाता है, कि बाल्यावस्था में लड़ना झगड़ना वृत्ति प्रधान होता है। अपनी बालक्रीड़ा की किसी प्रसिद्ध घटना को मध्य विभाग बना कर उक्त घटना को सम्बन्धित कर लेने से उक्त वाक्य बहुत ही शीघ्रता से स्मृति में आसकता है।

को एक दम ग्रहण नहीं कर सकता। इस लिये विदेशी भाषा को अथवा नवीन विषय को शनैः २ ग्रहण करना उपयोगी होता है।

आधुनिक सभ्यता का यह प्रधान सन्देश है कि अन्तर्जातीयता और अन्तर्राष्ट्रीयता प्रत्येक देश और जाति को स्वीकार करनी चाहिये। इस लिये अन्य देशीय भाषाओं का उचित ज्ञान प्राप्त करना अति आवश्यक है। अपना ज्ञान भंडार बढ़ाने के लिए भी दूसरी भाषाओं को सीखना अस्वाभाविक नहीं है। हमारा मनुष्य शरीर ही ज्ञान बढ़ाने का द्योतक है। अगर हम इस महान उद्देश्य से एक पल भी विमुख रहते हैं तो समझ लेना चाहिये, कि इस नश्वर शरीर के प्रति घोर अन्याय करते हैं। अस्तु विद्यार्थियों को भाषा ज्ञान और शब्द ज्ञान प्राप्त करने के लिए निम्न लिखित नियमों से कार्य करना चाहिये। हृदयस्थ करने के लिए भी इन्हीं विधियों का अनुशीलन करना ठीक है:—

(१) प्रचलित स्कूलों की प्रथा यह है, कि कठिन शब्दों की या अपरिचित शब्दों की शब्दावली बनाली जाती है और हमारे विद्यार्थी वर्ग समयानुसार रट लिया करते हैं।

रटना शिक्षा विज्ञान की दृष्टि से दूषित प्रथा है। इस विधि से मानसिक थकावट अधिक होती है। नवीन शब्दों को पाठ के साथ ही स्मरण करना चाहिये। शब्दावली से याद करने में विद्यार्थी को ठीक प्रकार से शब्द प्रयोग करना कठिन हो जाता है। देखा गया है, कि शब्दावली द्वारा याद किये हुए शब्दों को बड़े विद्यार्थी भी शुद्ध रूप से प्रयोग नहीं कर सकते। अगर शब्दावली किसी तरह से आवश्यक ही हो तो भी उसको पाठ के साथ ही याद करना मानसिक रूप से बहुत लाभ

दायक हो सकता है। शब्दावली को पाठ के साथ २ स्मरण करने से लेखक का विचार सम्बन्ध भी याद रह जाता है। कितने ही वार प्रयोग करने पर प्रतक्षतः देखा गया है, कि अगर लेखक का विचार सम्बन्ध याद रह गया तो, नवीन शब्द स्वतः ही पुनर्जीवित हो सकता है। और अगर शब्द याद रह गया तब लेखक का विचार भी अनायास उत्पन्न हो सकता है। इस लिए उपरोक्त विधि से याद करने में दो तरह का लाभ होता है।

पाठक प्रसंगानुसार देख चुके होंगे, कि मानसिक विधान स्वभावतः ही कम रुकावट स्वीकार करता है। इसलिये सब से पहिले आसान शब्दों को याद करना चाहिये। तब पश्चात् कठिन शब्दों को स्मरण करना बहुत ही आसान हो जाता है। कठिन शब्द उच्च लेखन शैली के अनुसार प्रत्येक पाठ में बहुत कम होने चाहिये उच्च श्रेणी के लेखों में ४ या ५ क्लिष्ट शब्द हुआ करते हैं। और कभी २ इनसे भी कम। इसलिए ऐसे ४ या ५ शब्दों को शीघ्रता से याद कर लिया जाता है। दो या तीन शब्द खंड वाले शब्द प्रायः आसान होते हैं। शेष शब्द कठिन ही होते हैं। लेकिन यह कठिनता विषयी की धारण शक्ति पर निर्भर रहती है। अगर विद्यार्थी आसान और कठिन शब्दों को कितने ही दिनों में विभाजित कर याद करे तब उसको कठिनता बहुत ही कम हो सकती है, जैसा कि पहिले कहा गया है।

विदेशी भाषा मातृ भाषा से बिल्कुल ही पृथक होती है। इस लिए विद्यार्थी को स्वर इत्यादि से परिचय प्राप्त करना बहुत ही कठिन हो जाता है। मानसिक कारण यह है, कि नवीन विषय को ग्रहण करने में स्नायु शक्ति को पृथक २ चैतन्य केन्द्र ग्रहण

करने पड़ते हैं। कितने मानसिक अन्वेषण करने पर ज्ञात हुआ है, कि बहुत से व्यक्तिओं के स्नायु और भाव कूपों की रचनानुसार नवीन विषय अथवा दूसरी भाषा का परियाप्त ज्ञान प्राप्त करना असम्भव हो जाता है। इसलिए सहसा कहा जा सकता है, कि ऐसी भाषाओं मे और विषयों में दक्षता प्राप्त करना असाधारण योग्यता या विशेष मानसिक चेतना का परिणाम होता है। अस्तु भाषा विशेपज्ञों का कहना है, कि संसार की सुविख्यात भाषाओं के स्वर व्यंजन प्रायः मिलते जुलते होते हैं। अतः भावों का सम्बन्ध सुगमता से स्थापित हो सकता है। मातृ भाषा और अन्य देशीय भाषा के शब्दों मे भी इसी प्रकार कुछ २ आवाज़ का सम्बन्ध होता ही है। ऐसे कितने शब्दों का अर्थ भी समान होता है। पुरातत्व वेत्ताओं का कहना है, कि जितने संसारिक व्यक्ति हैं। उन सबकी आदि काल में एक ही भाषा होना असम्भव नहीं हो सकता। आर्य्य जाति की संस्कृत भाषा थी। इस संस्कृत भाषा से ही संसार की बहुत सी उपस्थित भाषाओं की रचना हुई है। जितनी भी त्रिकोणा रूपी (Cuneiforms) लिपियां भाषाओं में हैं, उन सबकी उत्पत्ति एक भाषा से सम्भवतः हुई है।

लिपि के प्रचारों में और मानसिक विधान में भी बहुत घनिष्ट सम्बन्ध है। स्नायु शक्ति का स्नायु कूपों में प्रचालन भी अक्षरों के साक्षात स्वरूपवत् ही होता है। इसी प्रकार शब्दोंका उच्चारण भी होता है। उदाहरणतया "क" और "K" के उच्चारण में स्नायु शक्ति को भी इसी प्रकार रूप ग्रहण करना पड़ता है। जब इन का उच्चारण होगा, तब वायु को भी यही रूप देना पड़ता है। इत्यादि।

वस्तुतः शब्दों में और भाषाओं में सम्बन्ध होना भी प्राकृतिक ही है। गहरी मानसिक छान बीन से ज्ञात हो सकता है। स्मृति का सुविख्यात नियम विचार सम्बन्ध आन्तरिक कार्य क्रम पर स्थम्भित होता है। जब किसी व्यक्ति को अंगरेज़ी का शब्द "Surreptitiously" याद करना है, तो उसको एक उर्दू का शब्द "सरपट" के साथ सम्बन्धित करके याद करना चाहिये। इन दोनों शब्दों की आवाज़ में बहुत कुछ समानता है। इसलिए उक्त अंगरेज़ी के शब्द का और उर्दू के शब्द का विचार सम्बन्ध आसानी से हो सकता है इन दोनों का भाव भी करीब २ एक ही होता है। जब व्यक्ति सरपट चलता है। उस समय आवाज़ बहुत कम होती है। इसी प्रकार Molecule और मौलिक शब्दों में भी कुछ २ समानता है। दोनों शब्दों का मतलब भी कितनेही अर्थों में एक होता है। ग्रीक, लेटिन जर्मनी, फ्रेंच भाषा से और हिन्दी या संस्कृत के बहुत से शब्द का स्वर मिलता जुलता ही होता है। अतः उन को इस नियम की सहायता से बहुत आसानी से यादकर सकते हैं। कभी ऐसा भी होता है, कि विदेशी भाषा के शब्दों का कुछ २ भाग मातृ भाषा के शब्दों से मिल जाता है और शेष भाग नहीं मिलता। स्मरण रखना चाहिये, कि जब शब्द के दो या एक खंड देशी भाषा से पूर्णतया सम्बन्धित हो जाते हैं। शब्द के शेष असम्बन्धित खंड स्वतः ही पुनर्जीवित हो सकते हैं। इसका प्रचलित कारण यही है, कि स्नायु शक्ति उक्त विचार सम्बन्ध की सहायता से चैतन्य केन्द्रों को पार कर सकती है। उस समय कैसा ही कठिन शब्द खंड अथवा भाव क्यों न हो अनायास ही पुनर्जीवित हो सकता है। पाठकों ने और

विद्यार्थियों ने स्वतः भी अनुभव किया है। कि जब उन्हें किसी भाव या शब्द का कोई भाग याद होता है, तो बचा हुआ हिस्सा कुछ समय के मानसिक चिन्तन से स्वयम् ही स्मृति में आजाता है।

मनोवैज्ञानिक अभी तक यही निर्णय कर चुके हैं, कि आपस के सम्बन्धित विचार कूपों मे यह भी शक्ति होती है, कि वह असम्बन्धित भाव कूपों से मिल सकते है लेकिन यह दोनों उसी दशा में मिल जाते हैं, जब कि स्नायु शक्ति का आवेग बहुत ही प्रबल होता है। यह प्रबल और अखंड विचार अथवा चिन्तन से ही हो सकता है।

कितने ही पाठक इस स्थल पर शंका कर सकते हैं, कि उपरोक्त विधि का उपयोग, उनके लिए ही हितकर हो सकता है, जिनका मातृ भाषा का शब्द कोष बृहत हो। जितने भी संसारिक प्रदेश है, उन सब की प्रथा हैं, कि जब विद्यार्थी को मातृ भाषा का समुचित ज्ञान हो जाता है। उस समय ही वह अन्य जातीय भाषा को सीखने के लिए उद्यत होता है। हमारे देश का दुर्भाग्य है, और शिक्षा प्रणाली का संकुचित दृष्टि कोंण है, कि अविकसित छोटे २ विद्यार्थिओं को भी मातृ भाषा के अधूरे ज्ञान पर ही विदेशी भाषा सीखने के लिए ही वाध्य किया जाता है। माता पिताओं की अर्थ पिपासा में बच्चे अपने स्वास्थय और मस्तिष्क की मौलिकता को खो बैठते है। मातृ भाषा का स्थान बहुत से मानसिक कारणों से शिक्षा पद्धति में प्रधान होना चाहिये। विदेशी भाषा का स्थान गौड़ होना चाहिये। देश में शिक्षित व्यक्तिओं की कमी का एक कारण यह भी है, कि निर्धन देश विदेशी भाषा को सीखने के लिये

अधिक व्यय नहीं कर सकता। हर्ष का समय है, कि देश के प्रतिनिधिओं का ध्यान इस कमी की तरफ़ आकर्षित हुआ है। कलकत्ता विश्वविद्यालय ने सौभाग्य वश अग्रसर होकर प्रारम्भिक और माध्यमिक शिक्षा देशी भाषा में करदी है। उस समय की हमें शीघ्र ही प्रतीक्षा करनी चाहिये, जब कि देश का प्रत्येक विश्व विद्यालय उक्त विश्व विद्यालय का अनुकरण करने में उद्यत होगा। स्वतंत्र विचार श्रेणी के व्यक्ति उस समय दीख सकते हैं।

(२) प्रत्येक मनोविज्ञान वेत्ता की धारणा है, कि ज्ञान प्राप्त करने का एक मात्र साधन हमारी ज्ञानेन्द्रियां ही हैं। जो कुछ भी बाह्य संदेश मस्तिष्क को प्राप्त होता है। वह केवल इन इन्द्रियों के संतोष जनक कार्य पर निर्भर है। जितनी यह इन्द्रियां स्वस्थ होंगी, उतना ही ज्ञान प्राप्त करने का कार्य ठीक होगा। क्योंकि मस्तिष्क ज्ञान का भंडार है। इसलिए ही जितनी भी प्रसिद्ध ज्ञानेन्द्रियां हैं। वह सब मस्तिष्क के निकट ही स्थित हैं। नाक, कान, रसना, नेत्र का स्थान हमारे भिन्न २ मस्तिष्क के भागों के समीप है। कदाचित यह इन्द्रियां दूरस्थ होतीं, तो मस्तिष्क भी बहुत से संदेशों से वंचित रहता। मनुष्य जाति इतनी उन्नति भी नहीं कर सकती। मस्तिष्क परिणामतः बहुत से विषयों का अपूर्ण ज्ञान ही रखता। और स्मृति भी इतनी प्रचुर न होती। प्रकृति देवी ने सब ज्ञानेन्द्रिओं को और उनके भिन्न २ भागों को मस्तिष्क के निकट इसी लिए रखा है, कि मनुष्य को ज्ञान प्राप्ति के मार्ग में कम रुकावट हो। बाल मस्तिष्क की तथा भिन्न २ ज्ञानेन्द्रियों की बड़ी सहायता करते हैं। बाल सर्दी और गर्मी तथा धूप इत्यादि से मस्तिष्क और इन्द्रियों

की रक्षा करते हैं। यही नहीं यह बाल भिन्न २ आवेगों को नियत स्थान तक पहुँचाने में भी सहायता करते हैं। इसी तरह ज्ञानेन्द्रियों को भी यह समय २ पर बहुत कुछ योग देते हैं। कितने ही मनोविज्ञान वेत्ताओं का मत है कि एकाग्रता को भी ज्ञानेन्द्रियों के साथ २ बालों से कुछ २ योग मिलता है। बाल-कूपों द्वारा गंदा द्रव्य पदार्थ भी बाहर निकला करता है। इस से ज्ञानेन्द्रियां सदैव स्वस्थ्य रहती हैं।

अस्तु स्मृति उसी समय पूर्ण कार्य कर सकती है, जब कि उसको प्रत्येक ज्ञानेन्द्रियां योग दें। जैसा कि किसी स्थान पर कह चुके हैं, कि प्रतिमाओं का पूर्ण होना ही स्मृति को बलवान बनाना है। जितनी स्पष्ट प्रतिमा ज्ञानेन्द्रियों द्वारा बन सकेंगी। उसी अनुपात से भूत काल का अनुभव पर ज्ञान पुन र्जीवित हो सकता है। विषय को भी प्रथक २ ज्ञानेन्द्रियों द्वारा ग्रहण करना चाहिये। लेकिन उसका उपयोग करने के लिये सब इन्द्रियों को मिल कर योग देना चाहिये। उदाहरणतया गुलाब के पुष्प को आखों ने देखा, लेकिन उसकी पूर्ण व्याख्या व्यक्ति उसी समय कर सकता है, जबकि घ्रांण द्वारा भी उस पुष्प की महक का अनुभव किया हो। जिह्वा की सहायता से उक्त पुष्प का आस्वादन किया हो। इसलिये ही प्रत्येक विषय का सब इन्द्रियों को अनुभव करना ठीक ही नहीं, प्रतियुत आवश्यकीय है। अपूर्ण ज्ञान का कारण ही यही है, कि हर एक ज्ञानेन्द्रिय को विषय का अनुभव नहीं मिलता।

प्रतिमाओं की अनुपस्थिति में किसी विषय को हमारी ज्ञानेन्द्रियां और मस्तिष्क कदापि धारण नहीं कर सकता। अतः उस विषय की पुनरावृत्ति या स्मृति भी नहीं रह सकती।

मानलो कि किसी विद्यार्थी को कोई ऐतिहासिक घटना याद करनी है। उसको चाहिये, कि उस घटना की सब ज्ञानेन्द्रियों द्वारा स्पष्ट प्रतिमा बनाने का प्रयत्न करे। नेत्रों द्वारा युद्ध के बहुत से साधनों की कल्पना करे। श्रोतों से युद्ध के भीषण शब्दों की कल्पनात्मक आलोचना करे। घ्रांण द्वारा घ्रणित कार्यों की कल्पना करनी चाहिये। रसना से युद्ध सम्बन्धी रसों का स्वाद लेना बहुत उपयोगी हो सकता है। जितने भी चतुर प्राणी होते हैं, वह हर एक विषय को प्रत्येक ज्ञानेन्द्रिय द्वारा ग्रहण करते हैं। यह कहना ठीक नहीं, कि अमुक ज्ञानेन्द्रिय द्वारा एक ही विषय ग्रहण हो सकता है। ज्ञानेन्द्रियों का एक दूसरे से घनिष्ट सम्बन्ध होता है। इसलिये ही यह सब विषयों को यथा योग्य ले सकती हैं। यह सत्य है, कि नेत्र देखने का कार्य अन्य इन्द्रियों की अपेक्षा अधिक कर सकते हैं। स्थानाभाव के कारण सब ज्ञानेन्द्रियों की पूर्णतया व्याख्या नहीं हो सकती, लेकिन इतना सांकेत करना ठीक है, कि ज्ञानेन्द्रियां मुख्य २ स्थानों से अधिक विषय ग्रहण कर सकती हैं। रसना की नोक सब से पहिले मीठे का आस्वादन करती है। कड़वे पदार्थ को जिह्वा का पिछला भाग सब से पहिले मालूम कर सकता है। इसी प्रकार खट्टे द्रव्य पदार्थ को रसना के इधर उधर अर्थात् गालों की तरफ़ का हिस्सा शीघ्रता से ग्रहण कर सकता है। घ्रांण भी विषय के आस्वादन में सहायता करती है। अधिक गर्मी और सर्दी से भी इस इन्द्रिय के कार्य में बाधा हो जाती है। पाठकों ने प्रायः अनुभव किया होगा, कि जब जुकाम हो जाता है। उस समय रसना का कार्य भी मन्द हो जाता है। मीठे की मधुरता को लेने समय में केवल घ्रांण की सहायता

से रसना आस्वादन करती है। गूंगे व्यक्ति की घ्राण इन्द्रिय बहुत प्रबल हो जाती है यह रसना का कार्य कर निकलती है। ठंढ का प्रभाव पहिले कर्ण के भीतरी द्रव्य पदार्थ (Endolymph) को ही ज्ञात हो जाता है। बन्दूक की आवाज़ को और सुमधुर गान को कान का ऊपरी हिस्सा (Tympanum) महसूस करता है। स्मृति का कर्ण ही बहुत मानसिक दृष्टि से सहायक समझा जाता है। देखने और सुनने से ही जीता आवेग चैतन्य केन्द्रों तक पहुँचता है। लेकिन सुनना स्मृति के लिये बहुत उपयोगी होता है। लाल रंग का आंखों पर प्रबल असर होता है। इस रंग की प्रतिमायें दृष्टि यन्त्र द्वारा शीघ्रता से मस्तिष्क में पहुँच जाती हैं। हरा नीले रंग का प्रभाव माध्यमिक होता है। पीले रंग का असर बहुत कम होता है। मिश्रत रंग बहुत कठिनता से मस्तिष्क तक पहुँचता है। पीले सफ़ेद और मिश्रत रंगों को यद्यपि ज्ञानेन्द्रियां ग्रहण करती है, लेकिन असर स्नायु तक पहुँचते २ विलीन हो जाता है। मस्तिष्क के चैतन्य केन्द्रों को इनका आभास नहीं के बराबर ही होता है। ऐसी परिस्थिति में प्रति क्रियात्मक कार्य ही कठिनता से होता है। स्मृति की आशा करना भ्रम मात्र ही समझना चाहिये।

इस सब कथन से यही अभिप्राय है, कि विद्यार्थी अथवा प्रत्येक व्यक्ति को चाहिये, कि वह प्रत्येक ज्ञानेन्द्रियों के ठीक हिस्से द्वारा ही प्रतिमाओं के बनाने का प्रयत्न करे ऐसा कोई विषय नहीं जिसकी प्रतिमायें नहीं बन सकतीं। जितनी एकाग्रता अधिक होगी, उतनी ही स्पष्ट प्रतिमां बन सकती हैं। ऐसी ही प्रतिमां सुगमता से हमारी स्मृति की सहायता कर सकती हैं। भिन्न २ ज्ञानेन्द्रियों की सूक्ष्म से सूक्ष्म विषय

को आस्वादन तथा प्रतिमा बनाने की शक्ति को ही शिक्षा कह सकते हैं। The entire object of educational machinery presupposes cultivation of refined feelings and unmixed taste of our senses.

स्मृति का कार्य लेखन कला द्वारा भी सुलभ हो जाता है। जब से लेखन कला की उत्पत्ति हुई है। उस समय से स्मरण शक्ति का कार्य कम हो गया है। लेखन कला से लाभ अधिक और हानि कम है। अगर कुछ हानि है, तो वह मानसिक हानि हो सकती है। क्यों कि अब पहिले की तरह संस्कृत के पंडितों का अभाव है, जिनको कितनी ही पुस्तकें हृदयस्थ करना बहुत ही आसान होता था। इन विद्वानों की स्मरण शक्ति इतनी प्रबल थी, कि उनको आजन्म तक पुस्तकों की आवश्यकता नहीं रहती थी। तर्क मार्तण्ड स्वर्ग वासी सुदर्शनाचार्य जी शास्त्री को लेखक ने स्वयम् देखा था, कि उनकी स्मरण शक्ति जीर्णावस्था में इतनी प्रबल थी, कि वह ऊंची से ऊंची श्रेणी के विद्यार्थी को पुस्तकों की अनुपस्थिति में पढ़ाया करते थे। इसी प्रकार वृन्दावन वासी सुखदेवजी को १८००० भागवत के श्लोक स्मरण थे। पश्चिमी कितने ही विद्वानों ने संस्कृत के ऐसे पंडितों की मुक्त कंठ से प्रशंसा की है। आज कल भी कुछ थोड़े पंडित देखने में आते हैं। जो कुछ हो मध्ययुग में इसका प्रभाव अवश्य दीख पड़ता है। लेखन कला से यह मानसिक हानि अवश्य हुई है। हमारी अनन्य मानसिक शक्तियों का विकास भी लेखन कला द्वारा ही हुआ है। अतः यह मानसिक शक्ति लाभ की अपेक्षा बहुत न्यून है। समाज को इसे आसानी से सहन करना चाहिये।

चित्र कला और शिल्प कला भी लेखन कला का एक विशेष भाग है। इसलिए यह सब भी हमारी स्मरण शक्ति की सहायता करती हैं। कितने ही शब्दों को बार २ लिखकर याद कर सकते हैं। जो विषय अथवा भाव किसी तरह से हृदयस्थ नहीं हो सकते, उनको लिखकर या चित्रों द्वारा स्मरण किया जा सकता है। विदेशी भाषा को सीखने के लिये यह नियम बहुत उपयोगी होता है। इसी प्रकार कठिन शब्दों के हिज्जे भी याद होजाते हैं। इस विधि को कितने ही मनोविज्ञान वेत्ताओं ने प्रयोगिक क्रिया के नाम से पुकारा है। जो विषय या भाव किसी प्रकार से अङ्कित हो सकते है। उनका स्मरण होना भी आसान है। जिन विषयों की कल्पना हो सकती है। वह विषय परिश्रम द्वारा अमल मे भी लाये जा सकते हैं। मानसिक कारण यह है, कि हाथ और पैरों की गति द्वारा ही हमारी स्नायु शक्ति का अधिक संचालान होता है। जितनी स्नायु शक्ति की गति अधिक होगी उसी अनुपात से व्यक्ति ध्यानास्थ भी हो सकता है। यही दो शारीरिक अवयवों की गति से स्नायु शक्ति का रूप भी ठीक भाव की तरह हो जाता है। और तद्वत् ही उसे चैतन्य केन्द्रों को पार करना पड़ता है। इतने समय की एकाग्रता विचार सम्बन्ध स्थापित करने के लिए परियाप्त है। विचार सम्बन्ध को ही स्मृति के नाम से पुकार सकते है। जो कार्य हाथ से किया जावेगा उसमें अवधान होना बहुत ही स्वाभाविक है। लिखना हाथकी एक मुख्य क्रिया मानी गई है। अतः उससे एकाग्रता अनिवार्य होती है।

पाठकों ने अनुभव भी किया होगा कि बाल्यावस्था की सारी क्रीड़ा जीवन भर याद रहती है। बालकों का जीवन

प्रायः अमली अधिक होता है। अर्थात् वह प्रत्येक कार्य को स्वतः देख कर अपने हाथों से करते हैं। उनको अगर देख कर संतोष नहीं होता तब उस विषय को हाथ से स्पर्श करते हैं। या पदार्थ को तोड़ फोड़ कर संतोष करते हैं। इस सब क्रिया का उद्देश्य यही है, कि स्नायु शक्ति चैतन्य केन्द्रों को पार कर जावे, और विचार या भाव सम्बन्ध स्थापित हो जावे।

पाठक सविकल्पक प्रत्यक्ष ज्ञान का महत्व अन्यत्र देख चुके हैं। जितना प्रबल यह ज्ञान होगा। भविष्य में प्रतिमाओं को चेतना उसी मात्रा से मिल सकती है। ज्ञान प्राप्त करते समय भविष्य के उपयोग का बहुत ध्यान रखना चाहिये। यह ध्यान ही एक प्रसिद्ध विधि है। जिससे व्यक्ति किसी विषय को पूर्णरूपेण ग्रहण कर सकता है। हमको सदैव आशा वादी होना चाहिये। इस नियम से शुष्क विषय भी आशा से परिपूर्ण हो सकते हैं। जब विषय को आशा के घनिष्ट तन्तुओं से संसक्ति कर लिया जाता है। तब ही हम उसे पूर्णतया ग्रहण कर सकते हैं। या वह विषय स्मरण कर लिया जाता है।

प्रत्येक विषय का शीर्षक (Heading) बनाने का घोर प्रयत्न करना चाहिये। मानसिक यन्त्रालय इतना अगम्य और कोमल है, कि वह विवरणात्मक या विविध विषयों को आसानी से ग्रहण अथवा धारण नहीं कर सकता। स्नायु शक्ति के मार्ग इतने विभिन्न होते हैं, कि वह भी सीधे वंचित स्थान तक सहसा नहीं पहुँच सकती। जिधर उसको प्रबल आकर्षण मिलता है उधर ही चली जाती है। ऐसी परिस्थिति में स्मरण शक्ति या धारणा को शीर्षक बहुत ही लाभदायक होता है। यह विषय का सार या असली तत्व होना चाहिये ताकि व्यक्तिगत

योग्यतानुसार और आवश्यकतानुसार घटा और बढ़ा लिया जा सके। ध्यान रखना चाहिये, कि यह शीर्षक इतना सरल और प्रचलित हो, साथ ही साथ इसका सारे विषय के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध भी होना चाहिये। जिससे शीर्षक स्मरण आते ही, सारा विषय स्वतः ही सामने आजावे। कुशल और दक्ष विज्ञापन दाता बहुत ही सरल शीर्षक विज्ञापनों में देते हैं। जिससे सारा विषय अनायास ही पाठकों के ध्यान में आकर हृदयस्थ हो जावे। मानसिक कारण यह है, कि ध्यान विविध विषयों में नहीं जम सकता। विविध विषय ही स्नायु शक्ति को भिन्न २ मार्गों में लेजाते हैं। और छोटे २ या सार युक्त विषयों या वाक्यों पर ध्यान आसानी से जम सकता है।

किसी विषय को दुहराने अथवा रटने की विधि पर प्रसंगानुसार प्रकाश डालने का प्रयत्न किया है। यहां पर इतना ही कहना ठीक होगा, कि जितनी बार किसी विषय का निर्विघ्न मानसिक मनन किया जावेगा, उतना ही वह विषय स्मृति ग्राही हो सकता है। मनन से प्रतिमा अधिक बलवान हो जाती है। ऐसी ही प्रतिमाओं को आसानी से चेतना में परिवर्तन कर सकते हैं। पाठक स्मृति के तत्वों को अन्यत्र देख चुके होंगे, लेकिन चेतना भी एक विशेष तत्व माना गया है। यह चेतना समवधारण (प्रत्यक्ष ज्ञान) क्रिया के पश्चात् उपलब्ध हो सकती है।

प्रतिमाओं के दुहराने में किसी बाह्य पदार्थ की सहायता लेना अनावश्यक है। स्थाई प्रतिमा उसी समय निर्माण हो सकती है, जबकि सहायता सजातीय होगी या अव्यवधानता के साथ होगी। सजातीयता या समानता का मानसिक कारण

यही ज्ञात हुआ है, कि हमारे मस्तिष्क में भावकूप पृथक २ पड़े रहते हैं। इनका आपस में संयोग उसी समय होता है, जबकि समान या सजातीय भाव लिए हुये स्नायु शक्ति भाव कूपों में प्रवेश करती है। पाठकों ने अनुभव भी किया होगा, कि जब कोई सजातीय अतीव दुःखदाई या हर्षात्मक घटना उपस्थित हो जाती है। उस समय गत अनुभव कितनी आसानी से पुनर्जीवित हो जाता है। भावकूपों के आपस में संयोग होने से ही गत अनुभव की सारी घटनायें सामने आजाती हैं। जैसा कि पाठक देख चुके होंगे, कि रुचि सारी मानसिक शक्तिओं में विख्यात शक्ति है। रुचि द्वारा भी सदैव बलवान प्रतिमा बना करती है। इस तरह से बनी हुई प्रतिमाओं में भी कुछ २ वही शक्ति है। जोकि सजातीय भाव वाली प्रतिमाओं में होती है। इन प्रतिमा द्वारा भी भावकूप आपस में युक्त हो सकते हैं।

किसी असम्बन्धित विषय की माला की प्रतिमाओं को इस प्रकार से जोड़ना चाहिये, कि उसका पहिला भाग दूसरे को पुनर्जीवित करदे, दूसरा तीसरे को और तीसरा चौथे को इस विधि का पालन शनैः २ ही हो सकता है।

प्रकाशन शक्ति द्वारा भी किसी विषय को स्मरण कर सकते हैं। मनुष्य और पशुओं में केवल इतना ही अन्तर है, कि वह अपने भाव मनुष्य की तरह प्रकाश नहीं कर सकते। मनुष्य अपने दुःख और सुख को भाषा द्वारा कह सकता है। बुद्धि की सहायता से दुःख को सुख में परिवर्तन कर सकता है। पशु बुद्धि और समझने योग्य स्पष्ट भाषा की अनुपस्थिती में यह सब कार्य करने में सदैव असमर्थ है। Self expression (स्वयम् प्रकाशन) मनुष्य के लिये प्रकृति देवी का सब से बड़ा

शन है। प्रकाशन शक्ति द्वारा हमारी बहुतसी आन्तरिक शक्तिओं का विकास होता है। राजनीति के गम्भीर प्रश्न भी प्रकाशन शक्ति द्वारा सुलझाये जाते हैं। कलाओं का विकास भी इसी शक्ति पर अवलम्बित होता है। अपनी रक्षा और दूसरों की सहायता भी प्रकाशन द्वारा की जा सकती है। अनुभव को सञ्चय करना और आवश्यकतानुसार उसका उपयोग करना भी प्रकाशन शक्ति द्वारा ही हो सकता है। Emerson (इमर्सन) प्रकाशन शक्ति का अनुयाई था। उसने इस शक्ति की बहुत बड़ी प्रशंसा की है। सब कार्य इसी शक्ति पर निर्भर होते हैं। इसको जितना बढ़ाया जावेगा उतनी ही यह बढ़ सकती है।

किसी विषय अथवा भाव को प्रकाश करने में वही मानसिक क्रिया होती है जो उनको स्मरण करने में करनी पड़ती है। किसी भाव को भाषा द्वारा उस समय तक प्रकाश नहीं कर सकते, जब तक भाव कूपों का सम्बन्ध स्थापित नहीं हो जाता। यह सम्बन्ध या तो साथ ही साथ होता है। कठिन विषयों में दो या तीन सेकिन्ड में हो जाता है। पाठकों ने स्वयम् ही अनुभव किया होगा, कि जब तक विषय समझ में नहीं आ-जाता। हम संतोषजनक रूप से दूसरों को प्रभावित भी नहीं कर सकते। जिनका ज्ञान ऊंची अवस्था में होता है और भाव-कूप सघन होते हैं। उनका विचार सम्बन्ध या मन संयोग बड़ी शीघ्रता से हो जाता है।

शरीर, उसका कार्य, थकान, और विस्मृति।

आगे चलने के पहिले पाठकों को यह बतलाना चाहते हैं, कि शरीर का और मानसिक कार्यों तथा शारीरिक कार्यों का क्या सम्बन्ध होता है। स्वस्थ्य शरीर में ही स्वस्थ्य मस्तिष्क रह सकता है। शारीरिक शक्ति और मानसिक शक्ति में घनिष्ट सम्बन्ध होता है। हमारा कोई भी कार्य ऐसा नहीं होता, जिस में मन का योग नहो। पाठकों ने प्रायः अनुभव भी किया होगा, कि जब शारीरिक कष्ट हो जाता है तद्वत् मस्तिष्क को भी अपना कार्य छोड़ना पड़ता है। यह बहुत आवश्यक है, कि अनैच्छिक कार्य होते रहते हैं, और अनैच्छिक कार्यों के साथ लघु मस्तिष्क को भी अपना साधारण कार्य करना पड़ता है। हाथों को हिलाना, पलकों का मारना, स्वांस लेना, पैरों से चलना, देखना, और यथा शक्ति अपनी रक्षा करना भी अनैच्छिक कार्यों के अंतर्गत होता है। लेकिन जब व्यक्ति किसी भयंकर रोग से पीड़ित हो जाता है या रोग असाध्य हो जाता है। उस समय लघु मस्तिष्क भी कार्य करना छोड़ देता है और व्यक्ति को अनैच्छिक कार्यों में भी अधिक श्रम करना पड़ता है। सहिष्णुता इतनी निर्बल हो जाती है, कि मल मूत्र त्याग क्रिया को भी अधिकार में रखना कठिन हो जाता है। जब किसी व्यक्ति की अवस्था इतनी निर्बल हो जाय, कि वह स्वावलम्बन और मानसिक आवेगों की गति को न समझ सके। समझ लेना चाहिये, कि उसकी जीवन यात्रा शीघ्र ही समाप्त होगी। हेन मेन और उसके कितने ही अनुयाई जैसे डा० केन्ट इत्यादि का कहना है,

कि आत्मिक बल की कमी के साथ २ शारीरिक और मानसिक कमी भी होजाया करती है। यह ही नहीं जब व्यक्तिगत अन्तरात्मा निर्बल हो जाया करती है, उस समय इस नश्वर शरीर का भी अन्त होना सम्भव हो जाता है। हमारे यहां भगवद्गीता में भी यह ही मत और भी स्पष्ट कहा है :—

> बंधुरात्मात्मनस्तस्य येनात्मैवात्मना जितः ।
> अनात्मनस्तु शत्रुत्वे वर्तेतात्मैव शत्रुवत् ६-६ ॥

अस्तु मानसिक शक्ति उसी समय संतोष जनक कार्य कर सकती है, जबकि शारीरिक शक्ति का अनुपात बराबर हो।

नित्यप्रति के कार्यों में भी इन्ही दो शक्तिओं का बराबर अनुपात होने से, प्रत्येक कार्य संतोष जनक पूर्ण हो सकता है। एक शक्ति की कमी से दूसरी शक्ति स्वतः ही निर्बल हो जाती है। जिस तरह सदाचार सपन्न व्यक्ति किसी राष्ट्र के स्तम्भ होते हैं। उसी तरह सद् विचार हमारी शारीरिक और मानसिक परिस्थिती के मूल तत्व होते हैं। कुत्सित विचारों से अथवा कुकर्मों से, या अधिक श्रम से और अपरियाप्त भोजनों से उपरोक्त दोनों ही शक्तियों का ह्रास होना सम्भव हो जाता है। रुधिर का विशुद्ध अवस्था में और परियाप्त परिमाण रहना ठीक है। दुर्भावना शास्त्र (Itiology) का प्रसिद्ध नियम है, कि बुरे विचारों से हमारा रुधिर खराब हो जाता है। मनोवैज्ञानिक खोजों से ज्ञात हुआ है, कि दोषीजनों के रुधिर में कीटाणुओं का रूप ही दूसरा होता है इस रुधिर का एक पदार्थ विशेष से योग करने पर रुधिर का रंग नीला पड़ जाता है। अब पाठकों के हितार्थ शरीर और उसके कार्य पर भी प्रकाश डालने का उद्योग करेंगे।

हमारे हृदय में दाईं ओर बाईं ओर एक २ थैला है। जिसमें साधारणतया तीन छटांक रक्त का स्थान होता है। हमारी नाड़ी की गति प्रायः एक मिनट में ७५ बार है। १ मिनिट में २२५ छटांक रक्त एक थैले में आजाता है। १ घन्टे में २१ मन से ऊपर रुधिर इस थैले में आता और जाता है। एक दिवस में इस रक्त का परिमाण ५०० मन के लग भग होता है। एक थैले मे शुद्ध रक्त आता है। और दूसरे थैले में अशुद्ध रुधिर होता है। ऊपर की ओर फेफड़े होते है। इन को धोंकनी कहना भी ठीक है। स्वांस इन्हीं फेफड़ों में होकर आती और जाती है। इस धोकनी के फूलने और सुकुड़ने से हमारा रुधिर शुद्ध होता है। व्यक्ति एक मिनिट में प्रायः १७ बार श्वास लेता है। प्रति सेकिन्ड १७ बार शुद्ध वायु भीतर जाती है। और इतनी ही दूषित वायु बाहर आती है। दिन रात में २४४८० बार मनुष्य स्वांस लेता है। एक बार स्वांस लेने में ३० घन इन्च वायु भीतर जाती है। जब रुधिर के साथ औक्सजिन (प्रांण पद) वायु मिल जाती है। रुधिर को शुद्ध कर देती है। अशुद्ध वायु स्वयम ही बाहर निकल आती है। हमारे फेफड़े मे २६ घन इञ्च वायु जाती है। प्रत्येक फेफड़े में ६००,०००,००० के ऊपर वायु कूप भी होते हैं।

हमारा सारा शरीर चलनी के समान है। ऐसा कोई स्थान नहीं है। जिसमें चलनी के समान छिद्र नहीं। अभी तक इन छिद्रों की संख्या ७० लाख के लग भग ज्ञात हुई है। यह छिद्र हमारी स्वास्थ्य रक्षा के लिये बहुत ही उपयोगी होते हैं। भीतर से मल इत्यादि इन्हीं छिद्रों द्वारा बाहर आता रहता है। जब यह किसी कारणवश रुक जाते हैं। उसी समय मृत्यु घेर

होती है। यह छिद्र पसीने की नालियों के मुंह होते हैं। यह
नालियां $\frac{1}{4}$ इन्च लम्बी होती है। एक इन्च वर्ग स्थान में इनकी
संख्या २८०० होती है। सारे शरीर में इनकी संख्या ७० लाख
के ऊपर होती है। इन सब की लम्बाई २८ मील के बराबर होगी।
प्रत्येक छिद्र से प्रति मिनिट कई ग्रेन मैला द्रव्य निकला करता
है। जिसमें २ फ़ी सैकड़ा ठोस पदार्थ होता है। इसी तरह इन
रोम कूपों या छिद्रों द्वारा सारे शरीर से प्रति दिन ३००, ४००
ग्रेन मल बाहर आता है।

यह सब वायु कोष्ठ, भावकूप, फेफड़ा इत्यादि कितना कार्य
कर सकते हैं। व्यक्ति की शारीरिक कार्य करने की शक्ति साधा
रणतया उतनी ही है जितना कि ९०० टन बोझ एक फ़ीट ऊँचा
उठाने में शक्ति की आवश्यकता होती है। अगर यही शक्ति
सीधी चलने में लगादी जावे तब एक आदमी २४ घन्टे में १००
मील तक चल सकता है। मनुष्य की कार्य करने की अच्छी
योग्यता $\frac{1}{8}$ H. P. (घोड़े की शक्ति) के बराबर है। इस शक्ति
को $\frac{1}{4}$ हा० पावर की विशेष कार्य के लिये कर सकते हैं। जिस
मनुष्य का वज़न १५० पाउंड होता है। उसको नित्य प्रति के
कार्य के लिये २५०० केलोरीज़ शक्ति की आवश्यकता होती है।
एक केलोरी उस उष्णता का नाम है जो कि एक पौन्ड पानी
को ४ डि० तक गरम करने के लिये आवश्यक होती है। कार्य
से सारे शरीर के बोझ का $\frac{1}{80}$ भाग व्यय होता है। एक आउ-
न्स कारबों हाइड्रेट जब प्राण वायु (औक्सीजन) के साथ मिल
जाता है। उस समय ११६ केलोरीज़ गर्मी पैदा हो जाती है।
एक औन्स चर्बी में २६४ केलोरीज़ गर्मी होती है। इमको
उपरोक्त कार्य करने की शक्ति निम्न लिखित खाद्य पदार्थों की

गर्मी से प्राप्त हो सकती है। साधारणतया हमारे प्रति दिन [illegible] के लिये जीवन शक्ति प्रोटीन ४½ औंस, चिकनाई ३ औंस, चीनी या मैदा १४ औंस, और नमक १ औंस बहुत आवश्यक होता है। यह चारों पदार्थ हमको प्रत्येक गिज़ा में मिल सकते हैं। दाल, मेवा, अनाज, पनीर, मांस, अंडे, मछली दूध इत्यादि में इन चारों पदार्थों का आधिक्य होता है। अब पाठक पूर्णतया समझ चुके होंगे, कि हमारी शारीरिक रचना कैसी है। वह क्या और कितना कार्य योग्यता से कर सकती है। कौनसा खाद्य पदार्थ हमको साधारण कार्य करने की शक्ति प्रदान कर सकता है। शरीर विज्ञान की दृष्टि से निम्न लिखित प्रत्येक व्यक्ति को कम से कम नीचे लिखी हुई मात्रा में खाना मिलना साधारण स्वास्थ्य के लिये बहुत आवश्यक है।—

व्यक्ति तथा अवस्था		अनुपात प्रतिदिन कैलोरीज़ में	व्यक्ति तथा अवस्था		अनुपात प्रतिदिन कैलोरीज़ में
आदमी अधिक कार्य करने वाला		४०००	लड़की	१४–१८	३०००
साधारण	...	३४००	बच्चा या बच्ची	१२-१४	३०००
हल्का	...	३०००	,,	१०-१२	२८००
स्त्री अधिक कार्य करने वाली	...	३०००	,,	८-१०	२३००
मध्यम	...	२८००	,,	६-८	२०००
लड़का	१४–१८	३४००	,,	३-६	१७००
			,,	२-३	१४००
			,,	१-२	११००

एक कैलोरी का माप पहिले बतला दिया गया है।

साधारण शक्ति से परे कार्य करना, या दुर्भावना का प्रभाव सारे शरीर में कितनी शीघ्रता से प्रवेश कर सकता है। इसी

तरह थकान और अन्य प्रभावों की दशा होती है। जब कोई शारीरिक भाग अधिक कार्य से थक जाता है। तब उसका असर शीघ्रता से दूसरे शारीरिक अवयवों को आच्छादित कर देता है। रुधिर की गति के साथ २ थकान सारे शरीर में फैल जाती है।

अब यह प्रश्न उठता है, कि थकान क्या है, और उसका असर मानसिक तथा शारीरिक शक्ति पर कितना और कैसे पड़ता है। उपस्थित विषयानुसार मुख्यतः हम मानसिक शक्ति पर थकान के असर को समझाने का प्रयत्न करेंगे। लेकिन प्रसंगानुसार शारीरिक थकान पर भी ध्यान दिया जावेगा।

हमारी मांस पेशिओं की और स्नायुओं की झिल्ली मानसिक और शारीरिक कार्यों से अधिक व्यय हो जाती है। इन झिल्लियों द्वारा ही रक्त, मांस पेशिओं और स्नायुओं में जाता है। इन को मांसपेशिओं और स्नायुओं का ऊपरी भाग कहना भी ठीक होगा। पहिले पाठकों को बतला चुके हैं, कि प्रांण वायु की सहायता से रक्त की शुद्धि होती है और कार्य करने की गर्म्मी भी प्राप्त होती है। इस विधि को ओक्सीडेशन (Oxidation) कहते हैं। झिल्लियां इस कार्य से पतली पड़जाती हैं। इन झिल्लिओं को रुधिर से प्रांणवायु (ओक्सीजन) ठीक मात्रा में मिलने की आवश्यकता होती है। जितना व्यक्ति को शुद्ध रुधिर विशुद्ध प्रांण वायु की सहायता से प्राप्त होगा, उतना वह मानसिक और शारीरिक कार्य बल पूर्वक कर सकेगा। जब रक्त को प्रांणवायु कम मिलती है, उस समय झिल्लिओं का शनैः २ क्षीण होना आरम्भ हो जाता है। कार्य से भी यही दशा

हो जाती है। यह क्षीण होने का कार्य बहुत धीरे २ और थोड़ी थोड़ी झिल्लियों में होता है। जब यह झिल्लियां थोड़ी २ क्षीण हो जाती हैं। उस समय एक विषेला पदार्थ छोड़ जाती हैं। जिसको टोक्सिन (Toxin) कहते हैं। जब हम अधिक शीघ्रता से कार्य करते हैं। तब यह टोक्सिन (Toxins) विशेष मात्रा में और शीघ्रता से इकट्ठे हो जाते हैं। तत्पश्चात् यह टोक्सिन झिल्लियों को पतला कर देते हैं। खून में भी प्रवेश कर जाते हैं। कुछ समय पश्चात् सारा रक्त इस विषेले पदार्थ मे परिपूर्ण हो जाता है। झिल्लियों का पतला पड़जाना या फटजाना और टोक्सिन के पूर्णतया इकट्ठा हो जाने से थकान आना प्रारम्भ हो जाता है। मनोवैज्ञानिकों ने शारीरिक शिथिलता के मुख्य यही दो कारण माने हैं।

मुख्यतः हमारे स्नायु और वल्कक्षेत्र या विचार क्षेत्र (Cortex) जो कि चेतन्यसत्ता का केन्द्र माना जाता है। इस विषेले पदार्थ से बहुत शीघ्रता से प्रभावित हो जाता है। रुधिर की तीव्र गति से यह पदार्थ सारे शरीर में फेल जाता है। जब किसी विशेष अवयव में शिथिलता प्रतीत हो निकले, उस समय या तो विषय बदल देना चाहिये या शुद्ध वायु की तरफ़ बैठ जाना चाहिये। ऐसा करने से थकान फैलना रुक जाता है। लेकिन जब थकान मस्तिष्क में पहुँच जाती है। उस समय विषय बदलना ही उपयोगी होता है। इस विषेले पदार्थ से इच्छा शक्ति और बुद्धिबल शीघ्रता मे आच्छादित हो जाता है। हमारी मानसिक और शारीरिक स्फूर्ति इस विषेले पदार्थ से बहुत जल्दी नष्ट हो जाती है। जब हमारे शारीरिक और मानसिक कार्यों में सावधानी की कमी दीख पड़े। उस समय कार्य

करना बन्द कर देना ही उचित है। असावधानी से कार्य त्रुटि पूर्ण होता है। और ऐसे कार्यों का प्रतिफल भी संतोष जनक नहीं हो सकता।

थकान के उपरोक्त चिन्हों की अपेक्षा दूसरे शारीरिक सांकेत भी होते हैं। जब थकान हो जाती है, उस समय शारीरिक अवयवों की गति के लिये थोड़ीसी स्नायु शक्ति से भी मांस पेशिओं का प्रचालन नहीं हो सकता। पूर्ण स्वस्थ्य अवस्था में न्यून से न्यून स्नायु शक्ति के उपयोग से भी मांस पेशियां अपना संतोषजनक कार्य कर निकलती हैं। थकान की परिस्थिती में सिर, रीढ़, और हाथों को तुला हुआ सीधा नहीं रख सकते। जब थकान हो जाती है। उस समय चिड़चिड़ापन होना भी स्वाभाविक हो जाता है। भिन्न २ शारीरिक अवयवों की गति पर अधिकार नहीं रहता। नेत्रों की गति एकाग्र नहीं रहती। इधर उधर चलायमान होती है। मुख्याकृति सतेज और प्रदीप्त नहीं रह सकती। कार्यों मे ऐक्यता का अभाव हो जाता है। स्नायु केन्द्रों के थक जाने से छोटे लड़कों की तरह उंगलियां हतेली की तरफ़ झुक जाती है। थोड़ी सी आवज़ से हाथ और अन्य शारिरीक अवयव गति कर निकलते हैं। सिर एक तरफ़ को झुका हुआ रहता है। बाज़ू सीधे नहीं रह सकते। अर्थात् वह झुके रहते हैं। जब थकान अधिक हो जाती है। उस समय आंखों के पलक बन्द होना शुरू हो जाता है, और नींद आजाती है। नींद आना स्वाभाविक आराम होता है।

थकान को दूर करने के लिये केवल दो मार्ग है। पहिला विषय परिवर्तन और दूसरा आराम। विषय बदलने से थकान

को दूर करने का कारण यह है, कि नवीन भाव कूप और स्नायुओं को कार्य करना पड़ता है। यह प्रायः स्वस्थ्य अवस्था में होते हैं। लेकिन यह विधान उसी समय हो सकता है, जब कि थकावट थोड़ी ही हो। सारे शरीर में थकान फैल जाने पर विषय बदलने से भी कुछ लाभ नहीं हो सकता।

सोना सब आरामों से बढ़ कर मनुष्य समाज को प्रकृति देवी का दान है। थकान इससे बहुत ही जल्दी दूर हो जाती है। कारण यह है, कि जिन अवयवों में विषेला पदार्थ जमा हो जाता है। कार्य की अनुपस्थिती में रक्त इस पदार्थ को छोड़ देता है। तत्पश्चात् यह पदार्थ मल मूत्र और पसीना द्वारा शरीर से बाहर निकल जाता है। जब विषेला पदार्थ निकल जाता है। उस समय मरी हुई झिल्लियां भी पुनर्जीवित हो जाती हैं। इसी नियम से सोने के पश्चात् व्यक्ति पूर्ण स्वस्थ्य हो सकता है। थकान को दूर करने के लिये सोना बहुत ही आवश्यक है।

पाठक किसी स्थल पर देख चुके होंगे, कि मानसिक शक्ति एक विषय पर कभी भी स्थिर नहीं रह सकती। हमारा घल्क-क्षेत्र (विचार क्षेत्र) घात कोष्टों से परिपूर्ण होता है। जब एक प्रकार के घात कोष्ट कार्य मे थक जाते हैं। उस समय ध्यान स्वयम् ही बट जाता है। हम एक चित्र का किसी मुख्य घात कोष्टों की सहायता से अन्तर्योध कर रहे हैं। यह घात कोष्ट पुराने अनुभव युक्त भाव कूपों से भी जुड़े रहते हैं। यह भाव कूप उसी चित्र का सविकल्पक ज्ञान भी कर रहे हैं। जब उपरोक्त घात कोष्ट कार्य से थक जाते हैं। उस समय विचार अनायास ही भाव कूपों की सहायता से बदल जाता है। उसी विचार का एक नवीन रूप इस समय हो जाता है। अतः क्षोभ भी इसी

विधि का पालन करता है। अधिक अंतःक्षोभ से भी विषय के नवीन २ रूप हो जाते हैं।

विस्मृति भी दो मुख्य कारणों से हुआ करती है। पहिला कारण यह है, कि भाव कूपों की और स्नायु कोष्टों की भिन्नता के कारण ध्यान किसी विषय के अनेक रूपों को एक सी मानसिक शक्ति के साथ धारण नहीं कर सकता। साथ ही साथ धारण शक्ति भी एक साथ विषय के प्रत्येक अंग को नहीं ग्रहण कर सकती। जितने उपयोगी और समझ में आने योग्य विषय के अंग होते हैं, उनको ही धारण शक्ति अपना लेती है। दूसरे सब अंगों को छोड़ देती है। तत्काल लाभ होने वाले अंगों को अच्छी तरह से अपनाती है, और दूसरोंको कम। अतः विषय के विविध अंग भी विस्मृति के मुख्य कारण होते हैं। स्मृति बहुत ही थोड़े विषयों को एक समय में धारण कर सकती है।

प्रकृति के साम्राज्य में सब ही पदार्थों का अथवा भावनाओं का कुछ न कुछ लाभ अवश्य ही होता है। विस्मृति का भी ऐसा ही उपयोग हो सकता है। साधारण दृष्टि से देखने पर ज्ञात होता है, कि विस्मृति से बहुत हानि होती है। लेकिन गम्भीर आलोचना के पश्चात् ज्ञात हो जाता है, कि इस शक्ति का भी अपरमित लाभ है। अगर विस्मृति न होती, तो हमारे शोक और दुखों का अन्त भी न होता। मानसिक विभिन्नता और जटिलाता इतनी बढ़ जाती, कि मनुष्य की नवीन परिस्थियों पर सोचना और कार्य करना असम्भव हो जाता। पुरानी बातों के स्मरण से ही हम को छुटकारा न मिलता।

डा० जेस्ट्रो (Dr. Jastrew) ने पता लगाया है, कि जो कार्य या विषय नेत्रों से अथवा हाथों की सहायता से

साक्षात् किया जाता है, वह महीनों के पश्चात् भी उसी तरह से स्मरण रह सकता है, जैसा कि कुछ मिनिट के पश्चात् रह सकता है। बहुत से ऐतिहासिक और तीर्थ स्थानों को जब साक्षात् देखा जाता है, तब बहुत दिनों तक—नहीं २ जीवन भर याद रह सकते हैं। अव्याहत (निराकार) विषयों का याद रखना कुछ कठिन होता है। ऐसे विषयों की विस्मृति के बारे में कितनी ही परीक्षायें की गई। और यह निर्णय किया गया है कि ज्यों २ समय व्यतीत होता है उसी प्रकार भूलने की गति भी बढ़ती जाती है। लेकिन प्रथम भूलने की गति बहुत तेज़ होती है। जिस विषय को बहुत ध्यान से याद किया जाता है, वह शीघ्रता से विस्मरण होजाता है। जो कुछ याद किया जाता है, उसका आधा भाग पहिले घन्टे में ही भूल जाता है। $\frac{2}{3}$ वां हिस्सा ८ घन्टे म १२ शब्द खंड की ८ पंक्तियां इतनी शीघ्रता से विलीन होगई, कि लग भग आधा परिश्रम पुनः करना पड़ा। पश्चात उपरोक्त अंकों में भूलना होता रहा। २४ घन्टे के उपरान्त $\frac{1}{3}$ वां हिस्सा याद रहा। ६ दिन के पश्चात् $\frac{1}{4}$ भाग याद रहा। पूरे एक महीने के बाद जो कुछ याद किया गया था, उसका $\frac{1}{5}$ याद रह सका। एक माला को एक मास के पश्चात पुन. याद करने में पहिले समय का $\frac{4}{5}$ भाग लग जाता है।

१२७० सेकिन्ड के औसत से १६ शब्द खंड की ६ पंक्तियां स्मरण हो सकती हैं। २४ घन्टे के पश्चात पहिले समय का $\frac{2}{3}$ या ८४० सेकिन्ड म उन्हीं पंक्तियों को पुनः हृदयस्थ कर सकते हैं। जब इन पंक्तियों को फिर दो शब्दखंड कर के जमा लिया जाता है। और पहिले शब्दखंड को छोड़ कर कंठस्थ किया

जाता है। तब १५२ सेकिन्ड की बचत होती है। दूसरे शब्द खंड को छोड़ कर याद किया जाता है। तो ९४ सेकिन्ड का लाभ होता है। तीसरे शब्द-खंड को छोड़ कर याद करने से ७८ सेकिन्ड की, और ७ शब्द-खंड को छोड़ कर ४२ सेकिन्ड की बचत हो सकती है। किसी भी विचार श्रेणी को कंठस्थ करने के लिये, प्रत्येक प्रथक २ विचार खंड के प्रारम्भिक स्वर को ध्यान पूर्वक देख लेना चाहिये। शेष विचार स्वतः ही पुनर्जीवित हो सकते हैं। डा० जी० पेच बेकन एक स्थल पर लिखता है, कि जब हम दो भिन्न २ विचारों को स्मरण करना चाहते हैं, तो यह बहुत आवश्यक है, कि उक्त दो भावों को मीलान करने पर वे किस दशा में बराबर हैं, और किस तरह प्रथक हैं। अर्थात् उनमें ऐक्यता कितनी है, और अन्तर क्या है। अन्तर और ऐक्यता का प्रयोचन करना ही भावों का स्मरण करना होता है।

॥ इति शुभम् ॥